(देश देशान्तरों में प्रचारित, सबसे सस्ता, उच्च कोटि का आध्यात्मिक-पत्र)

सन्देश नहीं मैं स्वर्ग लोक का लाई।
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आई॥

वार्षिक मूल्य २) सम्पादक-श्रीराम शर्मा आचार्य। एक अंक ≈)

वर्ष ६ | मथुरा, १ फरवरी सन् १९४५ ई० | अंक २

आरम्भ छोटे से कीजिए।

किसी महान कार्य को आप पूरा करना चाहते हैं तो उसको एक साथ पूरा कर डालने के लिए मत अकुलाइए वरन् उस कार्य के एक छोटे भाग को हाथ में लीजिए। और उस भाग को पूरी सावधानी, दिलचस्पी, लगन और दृढ़ता से पूरा करने का प्रयत्न कीजिए। बीच बीच में यदि कुछ बाधाऐं आवें तो भी उस कार्य को छोड़िए नहीं वरन् जैसे भी बने वैसे थोड़ा बहुत समय उस कार्य के लिए नित्य लगाते रहिए। नियमित रूप से निरन्तर कार्य करने से बड़े बड़े मुश्किल काम आसान हो जाते हैं।

कार्य को आरम्भ करने से पूर्व यह देख लेना चाहिए कि हमारी शक्ति, योग्यता और साधन इस कार्य को पूरा करने में किस हद तक समर्थ हैं। यदि इस मार्ग में कठिनाइयाँ आवें तो किस हद तक उनके सामने ठहर सकने की मुझ में सामर्थ्य है। इन सब बातों पर विचार करते हुए कार्य को शुरू करना चाहिए। एक बार जब काम शुरू कर दिया जाय तो उसको किसी अच्छे परिणाम तक ले पहुँचने के लिए जी जान से कोशिश करनी चाहिए।

हमेशा छोटे कार्यों को हाथ में लीजिए, जिसे कि आप आसानी से पूरा कर सकें। सफलता, चाहे वह छोटे काम की ही क्यों न हो मनुष्यको एक नया बल प्रदान करती है, छोटे काम में सफल होने पर वह अपनी योग्यता और प्रतिभा का अनुभव करता है। एक कदम आगे बढ़ा देने पर रास्ता सुगम होजाता है। जिसका पहिया घूम गया उसकी गाड़ी चलने लगी। जिस आदमी को एक बार अपनी योग्यता [illegible] विश्वास होगया वह बड़े बड़े कठिन कामों में हाथ डालने लगता है और अपने आत्म विश्वास से उसे पूरा कर डालता है।

मनुष्य को देवता बनाने वाली पुस्तकें।

जो ज्ञान युगों के प्रयत्न से मिलता है उसे हम अनायास ही आपके सामने उपस्थित करते हैं

(१) मैं क्या हूं मूल्य ।=)
(२) सूर्य चिकित्सा विज्ञान ।=)
(३) प्राण चिकित्सा विज्ञान ।=)
(४) पर काया प्रवेश ।=)
(५) स्वस्थ और सुन्दर बननेकी अद्भुत विद्या ।=)
(६) मानवीय विद्युत के चमत्कार ।=)
(७) स्वर योग से दिव्य ज्ञान ।=)
(८) भोग में योग ।=)
(९) बुद्धि बढ़ाने के उपाय ।=)
(१०) धनवान बनने के गुप्त रहस्य ।=)
(११) पुत्र या पुत्री उत्पन्न करने की विधि ।=)
(१२) बशीकरण की सच्ची सिद्धि ।=)
(१३) मरने के बाद हमारा क्या होता है ।=)
(१४) जीव जन्तुओं की बोली समझना ।=)
(१५) ईश्वर कौन है ? कहां है ? कैसा है ? ।=)
(१६) क्या धर्म ? क्या अधर्म ? ।=)
(१७) गहना कर्मणो गतिः ।=)
(१८) जीवन की गूढ़ गुत्थियों पर प्रकाश ।=)
(१९) शक्ति संचय के पथ पर ।=)
(२०) पंचाध्यायी
(२१) आत्म गौरव की साधना
(२२) प्रतिष्ठा का उच्च सोपान
(२३) मित्र भाव बढ़ाने की कला
(२४) आन्तरिक उल्लास का विकाश
(२५) आगे बढ़ाने की तैयारी
(२६) अध्यात्म धर्म का अवलम्बन
(२७) ब्रह्म विद्या का रहस्योद्घाटन
(२८) ज्ञान योग, कर्मयोग, भक्तियोग
(२९) यम-नियम
(३०) आसन और प्राणायाम
(३१) प्रत्याहार धारणा, ध्यान और समाधि
(३२) तुलसी के अमृतोपम गुण
(३३) आकृति देखकर मनुष्य की पहचान
(३४) मैस्मरेजम की अनुभव पूर्ण शिक्षा
(३५) ईश्वर और स्वर्ग प्राप्ति का सच्चा मार्ग।
(३६) हस्त रेखा विज्ञान
(३७) विवेक सतसई
(३८) संजीवन विद्या

अन्य प्रकाशकों की कुछ उत्तमोत्तम पुस्तकें।

(१) सर्प विष चिकित्सा ।।)
(२) जल चिकित्सा ।।)
(३) गर्भ निरोध (संतान होना रोकना) ।-)
(४) नेत्र रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा ।-)
(५) दूध से सब रोगों का शर्तिया इलाज ।।)
(६) संक्षिप्त दुग्ध चिकित्सा ।-)
(७) प्राकृतिक चिकित्सा प्रश्नोत्तरी ।)
(८) प्राकृतिक चिकित्सा का सूर्योदय (दोनों भाग) ।।।)
(९) बुढ़ापा और बीमारी से बचने के सरल उपाय ।)
(१०) उपवास और फलाहार चिकित्सा ।)
(११) मिट्टी सभी रोगों की रामबाण औषधि है
(१२) पृथ्वी की रोगनाशक शक्ति
(१३) नवीन चिकित्सा पद्धति
(१४) हमें क्या खाना चाहिये
(१५) तम्बाकू प्राण घातक विष है
(१६) धूप हवा और सरदी से आरोग्य
(१७) ज्वर चिकित्सा
(१८) वस्त्रों का स्वास्थ्य पर भयङ्कर प्रभाव
(१९) धातु दुर्बलता की चिकित्सा
(२०) भोजन से आरोग्य रक्षा और चिकित्सा

नोट- कमीशन देना कतई बन्द है। आठ या इससे अधिक पुस्तकें लेने पर डाक खर्च हम अपना लगा देते

अखण्ड-ज्योति

सुधा बीज बोने से पहिले, काल कूट पीना होगा।
पहिन मौत का मुकुट विश्व-हित, मानव को जीना होगा॥

मथुरा १ फरवरी सन् १९४५ ई०

सिद्धियों का मूल प्रयोजन।

अपने ज्ञान विज्ञान के हथियारों को तेज करके प्रकृति के छिपे हुए तत्वों को मनुष्य धीरे धीरे खोदता और निकालता चला आ रहा है। जिस दिन जलती अग्नि का मनुष्य ने आविष्कार किया और उसका सदुपयोग सीखा उस दिन एक असाधारण क्रान्तिकारी समय है। उस दिन के अपने आविष्कार पर मनुष्य फूला न समाया होगा। वास्तव में अग्नि का ढूँढ निकालना एक असाधारण क्रान्ति थी, साधारण पशु की अपेक्षा इसी आविष्कार ने मनुष्य को हजारों गुना ऊँचा उठा दिया। एक एक करके धीरे धीरे खेती करना, पशु पालना कपड़े बनाना, हथियार चलाना, मकान बनाना, लिखना पढ़ना आदि अनेक आविष्कार हुए हर एक आविष्कार ने पहले की अपेक्षा मानव जीवन की सुख सुविधाओं में वृद्धि की। यह क्रम अभी तक निरन्तर बढ़ता चला आ रहा है। सुख और समृद्धि का प्यासा मनुष्य नित नये साधनों और तत्वों की खोज करता चला आ रहा है। अनेक वैज्ञानिक आविष्कार हो चुके हैं एवं बड़ी तेजी से और नये नये हो रहे हैं इस गति विधि का कभी अन्त न होगा। आदमी अपनी अधिक सुविधा के साधन अन्त तक ढूँढता ही रहेगा और ढूँढने वाले को कुछ न कुछ नया मिलता ही रहेगा। यह थोड़ा थोड़ा-कुछ कुछ इकट्ठा होते होते इतना अधिक हो जायगा जिसकी महत्ता आज कल्पना में भी नहीं आ सकती।

एक जमाना था जब मनुष्य का छोटा सा मस्तिष्क अधिक से अधिक सुविधाओं की इतनी ही कल्पना कर सकता था जो आज बहुत छोटी और थोड़ी मालूम पड़ती है। जब जल समूहों को पार करने के अच्छे साधन न थे तब इच्छा होती थी कि "पानी पर चल सकें।' पक्षियोंको आकाश में उड़ता देखकर इच्छा होती थी" "आकाश में उड़ सकें" घोड़े आदि जानवरों को द्रुति गति से भागता देख कर इच्छा होती थी कि "तीव्र गति से गमन कर सकें"। अपनी शक्तियों में न्यूनता देखकर उसने पूर्णता की बात सोची। आंखें थोड़ी ही दूर तक की चीज देख सकती थीं इसलिए इच्छा हुई—"दूर की चीजे देख सकें"। कान थोड़ी दूर की बात सुन सकते थे इसलिए इच्छा हुई "दूर की बातें सुन सकें।" और भी अनेक इच्छाऐं थीं-चाहा जाता था, वरुण देवता प्रसन्न होकर जल की कमी न रहने दें। सूर्य देवता प्रसन्न होकर--मन माना प्रकाश दिया करें। वायु देवता--ऐसे वश में रहें कि जब चाहें तब चलकर उष्णता मिटा दिया करें। अग्नि देवता प्रसन्न होकर 'वर्षामें भी प्रकट हो जाया करें।

एक समय यह सब बातें कल्पना का विषय थीं। मनुष्य सोचता था कि यह सब वस्तुऐं यदि मुझे मिल जाँय तो मैं अत्यन्त सुखी होऊँगा। किन्तु आज करीब करीब उन सभी इच्छाओं को मनुष्य ने अपने बुद्धि बल और बाहुबल की सहायता से पूर्ण कर लिया है। पानी के जहाज--अग्निबोट--बड़े से बड़े समुद्रों के ऊपर लाखों मन माल और हजारों यात्री लादे हुए निधड़क घूमते फिरते हैं। हवाई जहाज में बैठकर आकाश में पक्षियों की तरह उड़ा जा सकता है। मोटर या रेल में बैठकर घोड़ों से कई गुना तेज चला जा सकता है। दूरबीन और टेली-

विज्ञान की सहायता से घर बैठे हजारों योजन के दृश्य आंखों से देखे जा सकते हैं। टेलीफोन और रेडियो के द्वारा पृथ्वी के एक कोने की बात दूसरे कोने पर बैठकर सुनी जा सकती है। नल आप के घर में दिन रात जल की वर्षा करते हैं, खेतों में नहर लिए हुए वरुण देवता खड़े हैं। आज्ञा पाते ही बिजली का प्रकाश करने को सूर्यनारायण तैयार हैं। बटन दबाने की देर है कि वायुदेव चौकीदार की तरह पंखा करने में जुट जायेंगे। यहीं तक नहीं अग्निवाण, मोहनास्त्र, विद्युत वाण, ब्रह्मपाश, नागपाश, आदि शत्रु निवारण के महान हथियारों की सीमा को तोड़ फोड़कर आज के युद्ध अस्त्र अपने गजब के चमत्कार दिखा रहे हैं। बीस हजार वर्ष पुराने जमाने का कोई आदमी यदि आज के जमाने को देखनेकेलिए जीवित रहाहोता तो निस्संदेह-मुक्तकंठ से उसे कहना पड़ता--यह सिद्धों का, यक्ष गंधर्वों का युग है, यहां सिद्धियाँ हर एक मनुष्य के पैरों में लोटती फिरती हैं। जो बातें हमारे जमाने के लोगों को स्वर्गलोक के देव लोगों का वैभव मालूम होती थीं वह मृत्युलोक के साधारण व्यक्तियों के चारों ओर बिखरी पड़ी हैं। इसी प्रकार आज के जमाने का मनुष्य यदि किसी प्रकार पांच हजार वर्ष तक जीवित रह सके तो तब वह ऐसे ऐसे नये साधन देखेगा जिन्हें देखकर उसके आश्चर्य की सीमा न रहेगी। तब वह आदमी कहेगा आज मैं ऐसी ऐसी सिद्धियां लोगों के पैरों में पड़ी हुई देखता हूं जो सन् १९४५ ई० के लोगों को स्वप्न में भी प्राप्त न थी, कोई इसकी कल्पना भी न कर सकता था।

अभी बहुत सी कल्पनायें-इच्छायें और भी बाकी हैं। जैसे अदृश्य हो जाना, अमर हो जाना, छोटा हो जाना, बड़ा हो जाना, शरीर बदल लेना आदि आदि। विज्ञान ने शारीरिक आविष्कारों में अभी उतनी प्रगति नहीं की है जितना कि भौतिक आविष्कारों की दशा में। फिर भी बन्दर की गिल्टियां लगाकर बूढ़े को जवान बना देना नौ जवानों के खून के इजेकेशन लगाकर फिर तरुणाई ला देना, मनुष्यों की तरह बात चीत और काम करने वाले मशीनों के आदमी बना लेना, हड्डी टूट जाने पर वहां जानवरों की हड्डी फिट कर देना, आदि प्रगतियां धीरे धीरे होरही हैं कौन जानता है कि दस पाँच हजार वर्ष पीछे अणिमा महिमा लघिमा आदि सिद्धियां उस जमाने के आविष्कारों के सामने वैसी ही तुच्छ न मालूम पड़ने लगेंगी जैसी कि आज पानी पर चलना और तेज दौड़ना आदि निरर्थक मालूम पड़ती हैं।

पुरानी पुस्तकों में नाना प्रकार की सिद्धियों का वास्तविक, काल्पनिक, रोचक अलङ्कारिक और आकर्षक वर्णन लिखे हुए मिलते हैं। इस उल्लेख का एक मात्र हेतु यह है कि मनुष्य अधिकतम सुख सुविधाओं की आकांक्षा करें और उनकी प्राप्ति के के प्रयत्न में जुट रहे। तत्वदर्शी आचार्य जानते हैं कि जीव का व्यक्तिगत और सामूहिक लाभ इसी में है कि वह उन्नति के पथ पर तीव्रगति से जुटा रहे सृष्टि के आदि में देवता और राक्षसों ने मिल कर समुद्र का खारी और निरर्थक जल मथ डाला था फल स्वरूप उन्हें चौदह अमूल्य रत्न तो उसी समय मिल गये थे। तब से अब तक असंख्य मनुष्य समुद्र के गर्भ में से सम्पत्तियों से महा भण्डार ढूँढते और निकालते रहे हैं। ढूँढने वालों का पौरुष थक जायगा पर समुद्र की रत्न राशि न घटेगी, यह एक शाश्वत सत्य है कि-'मंथन से रत्न राशि मिलती थी।' बुद्धि का मंथन कीजिए-विद्या पढ़िए, शरीर का मंथन कीजिए-पहलवानी करिए, आत्मा का मंथन कीजिए-योग साधिए संसार का मंथन कीजिए- महत्व पूर्ण कार्यों का सम्पादन करिए, जिधर भी पग बढ़ाइए जिधर भी मंथन कीजिए रत्नों को राशि मिलेगी। इस संसार में दृश्य और अदृश्य अनेकों समुद्र हैं, आप जिसका भी मंथन करेंगे, जिस दिशा में प्रगति करेंगे उसी दिशा में सफलताओं का, सिद्धियों का समूह प्राप्त होगा।

हमारे यहां मथुरा से छै मील दूर वृन्दावन में एक "पुराना गोविन्द" नाम का मन्दिर है। इसकी इमारत बड़ी आलीशान है-कहते हैं कि उसे रातोरात किसी भूत ने बना दिया था। इसके पड़ौस में ही रङ्गजी का मन्दिर है। यह सेठ लखमीचन्दजी का बनवाया हुआ है। जयपुर वाला मन्दिर भी पास ही है। यह दोनों मंदिर भी अपने ढङ्ग के अनोखे हैं और इनके अन्दर भी ऐसी विशेषताऐं हैं जिनके कारण वह भी उस भूतों के बने मन्दिर से कम नहीं ठहरते। भूत, देव, दानव और यक्ष राक्षसों की शक्तियों को बड़ा महत्व दिया जाता है परन्तु सच पूछा जाय तो मनुष्य स्वयं इन सब से ऊपर है। मनुष्य ने भक्त बनकर भगवान को वश में कर लिया है, तपस्या करके देवताओं को अपने काबू में कर लिया है, पुरुषार्थ और बुद्धि कौशल से सृष्टि की समस्त जड़ चेतनाशक्ति पर अपना अधिकार कर लिया है। इस लोक में जैसे देवताओं की शक्तियों प्रशंसा को जाती है, कौन जानता है कि बेचारे इस सर्वग्राही मानव प्राणी की क्रिया शक्ति देखकर दाँतों तले उँगली दबाये न बैठे होंगे।

मनुष्य स्वयं शक्ति सम्पन्न तेज पुञ्ज, महानताओं का भण्डार और सिद्धियों का समूह है। इसकी नस नस में सिद्धियां और बोटी बोटी में ऋद्धियां समाई पड़ी हैं। जब तक यह सोया हुआ, आलसी और अचेतन्य पड़ा है तब तक यह दीन, दरिद्री, भाग्य का मारा ग्रहों का सताया है जब वह जागृत होकर अपनी शक्तियोंका निरीक्षण करताहुआ अपना गौरव अनुभव करता है. और अपने पुरुष नाम को सार्थक करता हुआ पुरुषार्थ करने पर खड़ा होता है तो एक से एक बड़ा सिद्धि, एक से एक महान सम्पदा उसके चरणों में लोटती है। भगवान ने पातञ्जलि योगदर्शन में कहा है—"प्रतिभायां सर्व सिद्धि" अर्थात्—प्रतिभा से सब सिद्धियां मिलती हैं। सम्पूर्ण सिद्धियों की जननी प्रतिभा है। प्रतिभाशाली मनुष्य एक प्रकार का 'सिद्ध पुरुष" होता है वह जिस काम में हाथ डालता है उस काम में सफलता ही सफलता मिलती है। जब कोई मनुष्य अपनी महानता का अनुभव करता हुआ आत्म विश्वास और दृढ़ता के साथ किसी कार्य को पूरा करने में जुट पड़ता है तो उसमें सफलता प्राप्त कर ही लेता है। संसार का इतिहास ऐसे महापुरुषों की गुण गाथाओं से भरा पड़ा है जो आरंभ में छोटे थे, गरीब घर में जन्मे थे, कोई उनका सहायक न था, साधनों से वे सर्वथा हीन थे तो भी उन्होंने प्रयत्न किया अपनी प्रतिभा के बल पर उन्नति की और अन्त में विजयी वीर पुरुषों की श्रेणी में अपना नाम लिख कर बिदा हुए। क्या यह सफलताऐं समृद्धियां-किसी ने कृपा पूर्वक उन्हें उपहार में दी थी? नहीं-कदापि नहीं-जो कुछ पाया, जो कुछ कमाया उन्होंने अपनी प्रतिभा के बल से उपार्जित किया। प्रतिभा के ही सर्व सिद्धियों की जननी है पातञ्जलि का यह कथन मिथ्या नहीं है।

नाना प्रकार की सिद्धियों का वर्णन प्राचीन पुस्तकों में मिलता है। उन्हें पढ़कर आप ऐसा न समझें कि बस यही सिद्धियों की अन्तिम मर्यादा है। पानी पर चलना, हवा में उड़ना, दूर की बात सुनना, दूर तक देखना, तेज चलना, यह सब आकांक्षाऐं मनुष्य ने अब बहुत अंशों में पूरी करली हैं जो अंश शेष है उसकी पूर्ति भी निकट भविष्य में हो जानी सम्भव है। आकांक्षाऐं नित नई पैदा होती हैं और कालान्तर में उनकी पूर्ति भी होजाती है इस प्रकार सिद्धियों की सीमा भी नई निर्धारित होती है। आप इस वाह्य रूप में मत उलझिए वरन् गहरे उतरिए और अनुभव कीजिए कि सिद्धियों का आकर्षण इस लिये बनाया गया है कि मनुष्य साधना में प्रवृत्त रहे। साधना स्वयं एक सिद्धि है। काम करने में, संघर्ष रत होने में, आगे बढ़ाने की तैयारी में, पुरुषार्थ में खुद एक आनंद है और वह आनन्द सफलता के उपभोग से अधिक है। कुछ खोदते हुए मनुष्य का अन्तःकरण जितना आशा, उत्साह, उल्लास, और

भविष्य की कल्पना में आनंद विभोर रहता है, कुआ खुद जाने पर, उसका पानी प्रयोग में लाने पर उतना नहीं रहता। विवाह से पूर्व कितनी खुशी होती है परन्तु बीबी घर में आ जाने पर, बाल बच्चे होजाने पर तो एक झमेला खड़ा हो जाता है। सफलता स्वयं इतनी आनन्द दायक नहीं है जितनी उसकी साधना। आज हवा में उड़ने वाले जहाजों का और तेज ले जाने वाले मोटरों का क्या महत्व है? कुछ नहीं। इसी प्रकार अन्य इच्छाऐं जो आज लालायित किये हुए हैं पूर्ण हो जाने पर नीरस प्रतीत होंगी। आनन्द साधना में है। विज्ञ पुरुषों ने सिद्धि पथ पर चलनेके लिए हमें इसीलिए प्रेरित कियाहै कि निरन्तर साधना में लगे रहें और उसका आनन्द निरन्तर चखते रहें। अमुक सीमा तक—अमुक सिद्ध तक—पहुँच जाने पर भी ठहरना न चाहिए वरन् निरन्तर आगे ही बढ़ते रहना चाहिए।

साधना का एक मात्र क्षेत्र है "आत्मोन्नति"। आप अपनी उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हूजिए, अपने को अधिक से अधिक उन्नतिशील बनाने में जुटे रहिए। आत्मोन्नति ही सिद्धि है, यही विश्व की सेवा और परमार्थ है। अपने आप को उन्नतिशील बनाकर एक ऐसा नमूना संसार के सामने पेश किया जा सकता है कि जिसके नकल करने के प्रयत्न मात्र में दूसरों का भला हो। जो महापुरुष इस संसार से चले गये हैं वे भी संसार की बहुत भारी सेवा अब तक कर रहे हैं उनके चरित्र से असंख्य मनुष्य को बल मिलता है और पथ प्रदर्शन होता है। अपनी भीतरी और बाहरी उन्नति से संतुष्ट नहीं होना चाहिए वरन् आगे ही बढ़ते चलना चाहिए। स्वास्थ्य, ज्ञान मैत्री, प्रतिष्ठा, सभ्यता, धन, तथा साहस यह सातों वस्तुऐं अधि[illegible] अधिक मात्रा में उपार्जित करनी चाहिए और इनका उपयोग सत्कार्यों में, लोकहित के परमार्थ के [illegible]मों में करना चाहिए। आत्मोन्नति की साधना का मार्ग ऐसा आनंद मय है कि उसे प्रत्यक्ष सिद्धि ही कहा जा सकता है।——

धर्मात्मा और पापी की पहचान।

धर्मात्मा की पहचान यह देखकर की जा सकती है कि वह अपनी ताकत का स्तैमाल किस प्रकार के कामों में कर रहा है? यदि किसी के पुण्यात्मा या पापी होने की परीक्षा करनी हो तो देखना चाहिये कि वह अपने निकटवर्ती लोगों के साथ कैसा बर्ताव करता है? यदि वह सहानुभूति, उदारता, भलमनसाहत और ईमानदारी का बर्ताव करता हो तो समझना चाहिये कि यह धर्मात्मा है और यदि कटु-भाषण निन्दा, कुढ़न, अनुदारता, द्वेष और कपट से उसका व्यवहार भरा हुआ हो तो समझ लेना चाहिये कि यह धर्मात्मा नहीं है।

नीति का वाक्य है कि-दुष्ट पुरुष विद्या को विवाद में धन को अहङ्कार में, बल को पर पीड़ा में, लगाते हैं, इनके विपरीत धर्मात्मा पुरुष विद्या से संसार में ज्ञान का प्रकाश करते है, धन को दान करते हैं और बल से निर्बलों की रक्षा करते हैं। मनुष्य में यह तीन बल ही प्रधान हैं। ज्ञान द्वारा संसार की सेवा करने वाले ब्राह्मण हैं, बल द्वारा संसार का उपकार करने वाले क्षत्रिय हैं, धन द्वारा विश्व कल्याण की साधना करने वाले वैश्य हैं। जिन के पास इन तीनों बलों में से एक भी नहीं, जो पराधीन रहकर टहल चाकरी करते हैं वे शूद्र हैं। शूद्रों को हीन समझा जाता है क्योंकि वे शक्ति संचय की ओर ध्यान नहीं देते, और निर्बल अवस्था में पड़ा रहना स्वीकार करते हैं किन्तु वे लोग असुर [illegible] दैत्य हैं जो इन तीनों शक्तियों के स्वामी होते हुए भी उनका दुरुपयोग करते हैं।

देवता और असुरों में एक ही अन्तर है कि देवता अपनी शक्तियों द्वारा दूसरों का हित [illegible] करते हैं सहारा देते हैं, किन्तु असुर लोग किस[illegible] कष्ट या अभाव की परवा न करते हुए अपन[illegible] खुदगर्जी को तृप्त करने में अन्धे रहते हैं यही धर्मात्मा और पापी की पहचान है।

महान् जागरण।

(प्रसिद्ध तत्ववेत्ता डाक्टर रामचरण महेन्द्र एम० ए० डी० लिट् एफ० बी० टी० आई० (लंदन)

(प्रस्तुत लेख माला के अन्तर्गत डाक्टर महेन्द्र के ऐसे अनुभव पूर्ण साधन, अभ्यास तथा मनोवैज्ञानिक प्रयोगों का विशद विवेचन रहेगा जिससे पाठक अपूर्व मानसिक, बौद्धिक एवं आत्मिक सामग्री एकत्रित कर सकेंगे। स्व-संकेत (Auto suggestion) क्या है? उसका मनोवैज्ञानिक आधार कहां है? कैसे चमत्कारिक कार्य करता है?—इत्यादि महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया जायगा सं०)

अन्तर्वृत्ति का निर्माण—क्या तुमने अपने चिंतन के क्षणों में इस तत्त्व पर मनः क्रिया केन्द्रित की है कि मानव की चित्तवृत्ति, स्वभाव आदतें, भावनाऐं- प्रसुप्त आकांक्षाऐं किस आधार शिला पर स्थित हैं? मानसिक स्थितियों, उत्कृष्ट या निकृष्ट भूमिकाओं का निर्माण कौन करता है? वासनाओं अथवा मनोविकारों को प्रदीप्त करने वाला कौन तत्त्व है? अन्तःकरण में विशुद्ध सजातीय पदार्थ [illegible]वा विषैले विजातीय कण क्यों आन्दोलन उत्पन्न करते हैं?

असंख्य व्यक्ति रात दिन किसी काल्पनिक शत्रु से प्रतिशोध लेने की युक्ति सोचा करते हैं। अमुक हमारा बैरी है, वह हमारी त्रुटियां, कमजोरियाँ, बुराइयां लोगों को बतलाता फिरता है, हमारी ओर वाक्य-बाण कसता है, हमें अभद्र शब्दावलि सुनाता है, हम से ईर्षा, बैर, द्वेष करता है। ऐसे सुकुमार छुई मुई (sensitive प्रकृति वाले व्यक्ति तनिक सी बात में चिढ़ जाते हैं. विक्षुब्ध हो उठते हैं और आत्मबल को क्षय करने लगते हैं।

कुछ व्यक्ति विगत प्रसङ्गों, पुरानी व्यथाओं, बीते हुए कटु दृश्यों का स्मरण कर अनायास ही [illegible]म से हो उठते हैं। यदि ऐसा न करके ऐसा [illegible], तो सब ठीक हो जाता, रोगी को अमुक औषधि न देकर अमुक प्रदान करते फलां डाक्टर की औषधि न करा फलां की कराते तो प्रियजन की मृत्यु कदापि न होती। हमने अमुक समय बड़ी गलती कर डाली। बस उसी त्रुटि ने हमारा जीवन-खेल समाप्त कर डाला, अमुक बात हो जाती तो सम्पूर्ण जीवन स्वर्णमय हो जाता।

एक वे भी हैं जो भ्रान्ति के कारण मिथ्या दुःखों के दर्शन किया करते हैं। वे ऐसी बातें सोचते हैं जिनका पृथ्वी तल पर कोई अस्तित्व नहीं। उनके मनः चित्र इतने विकृत होते हैं कि भिन्न २ हेतुओं में भयङ्कर उत्क्रांति मची रहती है। वे एकान्त में बड़ बड़ाते हैं तथा अदृश्य वस्तुओं से तादात्म्य कर विक्षुब्ध हुआ करते हैं।

ये सब मनः स्थितियां, अन्तःकरण की विभिन्न क्रियाएँ केवल एक तत्त्व पर स्थित हैं। यह महान् वस्तु है—विचार। आज तक विश्व में जो जो महत्त्व पूर्ण आश्चर्य चकित देने वाले महान् कार्य हुए हैं, जो कुछ उत्कृष्ट कार्य हो रहा है वह मनुष्य के उस दिव्य गुण का ही चमत्कार है जिसे मनोविज्ञानवेत्ता विचार कहते हैं। व्याकुलता, संतुलन, उच्च या निम्न भूमिका, क्षोभ, चित्त की सुस्थिरता, मित्र अथवा शत्रु हमें जो कुछ भी प्राप्त है, हो रहा है यह सब हमारे विचारों के ही परिणाम हैं।

जीवन में चहुँ ओर जो अन्धकार या प्रकाश, बिपत्ति वा प्रतिकूलता तुम्हें दृष्टिगोचर होता है वह विचारों के ही फल हैं। भूतकाल की स्मृतिएँ, काल्पनिक दुःख, जादू की मिथ्या भावना, दूसरों की आलोचना स्वयं हमारे निजी विचारों की प्रतिच्छाया (Reflection) मात्र हैं।

जीवन की यथार्थता हमारे विचारों पर निर्भर है। आज आप जो हैं, अपने जीवन को जिस—उत्कृष्ट या निम्न स्थिति में रक्खे हुए हैं, आप का अन्तःकरण, इच्छाएँ वाह्य स्वरूप, वातावरण, मानसिक संतुलन प्रायः प्रत्येक तत्व हमारे विचारों के परिणाम हैं। मनुष्य की सर्व महत्ता, जीवन के सर्वोत्तम कर्त्तव्य उसके प्रबल स्थायी विचारों पर निर्भर हैं।

उत्पादक शक्ति का अखंड नियम—कर्म हमारे विचारों के रूप हैं। सर्व प्रथम विचार मन में प्रतिक्रिया उत्पन्न करते हैं और जब ये विचार मनमें प्रबलता से (Fixedly) अङ्कित हो जाते हैं, गहरी नींव पकड़ लेते हैं, तब तदानुकूल ही वाह्य अङ्ग प्रत्यङ्ग क्रियाएँ करते हैं। अन्तःकरण में विचारों का एक वृहत्त भंडार रहता है। वे क्षण क्षण उत्पन्न एवं विनिष्ट हुआ करते हैं। अन्तःकरण में विचार के अभाव में कोई भी क्रिया सम्पन्न नहीं होती।

इन विचारों के भी विभिन्न प्रकट, भेद अभेद हैं कुछ तो ऐसे होते हैं जो पानी के क्षणिक बुलबुले के अनुरूप क्षत विक्षत होते रहते हैं। वे बनते हैं बिगड़ते हैं तथा मन पर कोई गहरा प्रभाव नहीं छोड़ जाते। जैसे पानी में नौका विहार के समय रेखाएँ हो जाती हैं किन्तु क्षण भर में विलीन हो जाती हैं वैसे ही इन क्षणिक विचारों की क्रिया भी है। ये आये और गये, उत्पन्न हुए और विनष्ट हुए।

कुछ विचार दूसरों के संकेत से मन में प्रवेश करते हैं, अन्दोलन उत्पन्न करते हैं, कुछ काल तक टिकते हैं किन्तु तत्पश्चात् विलीन हो जाते हैं।

जिन विचारों से मनोभूमि में स्थायी छाप पड़ती है, जिन से हमारे अन्तःकरण में प्रबल सत्ता अंकित होती है जो पुनरावृत्ति के कारण स्वभाव के एक विशिष्ट अङ्ग बन जाते हैं, उन्हीं विचारों का विशेष महत्त्व है। मानसशास्त्र (Psychology) इस तत्त्व का दृढ़ता पूर्वक निर्देष करता है कि इस प्रबल विचार की सत्ता महान् है—यह स्थूल वस्तु है। जो ठीक सम्यक रीति से विचार करने की कला से परिचित है वह अपना भाग्य, दृष्टिकोण, वातावरण परिवर्तित कर सकता है। जो उचित रीति से विचार बोना जानता है, विचार बीजों का पारखी है, उचित औचित्य से पूर्णतः परिचित है, वह अपने भाग्य स्वभाव तथा वातावरण को परिवर्तित कर सकता है।

आज आप जैसे कुछ—अच्छे बुरे—हैं, अपने जीवन को जिस स्थिति में रखे हुए हैं, आप का अन्तःकरण, इच्छाएँ, वाह्य स्वरूप, वातावरण, मानसिक संतुलन—सब कुछ आपके निजी विचारों के परिणाम हैं। जैसे तुम्हारे विचार होंगे तदानुकूल ही तुम्हारे भविष्य का निर्माण होगा।

बीज के अनुसार वृक्ष की उत्पत्ति होती है। जैसे बीज बोओगे वैसा ही पौधा उत्पन्न होगा। जैसे विचार मनमें उत्पन्न होंगे वैसा ही जीवन निर्माण होगा। सर्व प्रथम विचार मनमें उत्पन्न होता है, मस्तिष्क से संयुक्त गतिवाहक सूक्ष्म तन्तुओं पर उसका प्रभाव होता है। अन्त में प्रबल विचार के अनुकूल ही कार्य करने की बलवत्तर प्रेरणा की उत्पत्ति होती है। पहिले विचार तत्पश्चात् क्रिया और व्यवहार रूप में परिणति—यही नियम है।

उत्पादक शक्ति का अखंड नियम यह है कि जैसे विचार होंगे, वैसा ही निर्माण होगा। जैसा हम विचार करेंगे वैसी ही आदतें बनेगी, जैसे विचार मनः सरोव में उत्पन्न होंगे वैसा ही स्वभाव का निर्माण होता जायगा। शोक संताप के विचारों से, चिड़चिड़ेपन, रोने चिल्लाने से जीवन की मृदुता नष्ट होती है।

मानव के जैसे विचार होते हैं वैसा ही वह होता है—जिस महापुरुष ने यह महा सत्य मालूम किया वह सचमुच महान् दार्शनिक विचार का रहा होगा क्योंकि विश्व के समग्र व्यक्तियों के भविष्य मनोरथ, उद्देश्य, सिद्धि एवं सफलता इसी महा सत्य के इर्द गिर्द चक्कर लगा रहे हैं। हमारी समस्त आशा,

ा, लालसा, मनोवृत्ति सब के पृष्ठ भाग में यही
ा सत्य अलौकिक सत्य अन्तर्हित है। यह वह
ा (Great Principle of Life) है जो हमें
ादक शक्तिएँ प्रदान करता है।

उत्पादक शक्ति का अटल नियम यह है कि जिन विचारों पर हम दृढ़ता पूर्वक विश्वास करते हैं, जिन के पीछे बलवत्तर प्रेरणा प्रस्तुत रहती है, जो विचार बारम्बार मस्तिष्क में उठता है तथा जिसका पुनरावर्त्तन (Repeatation) चलता रहता है उन्हीं के अनुसार हमारा जीवन ढल जाता है। बात यह है कि हम अपने आप को जैसा मानने लगते हैं, अपने बारे में जो दृढ़ चिंतन कर लेते हैं, जि विचारों में संलग्न रहते हैं, क्रमशः वैस ही होते जाते हैं। जैसे हमारे आदर्श होते हैं, जैसी हमारी मानसिक अभिलाषाएँ होती हैं, जैसे हमारे हार्दिक भाव होते हैं, ठीक उन्हीं का विम्ब प्रतिविम्ब हमारे स्वमंडल पर द्युतिमान् हो उठता है। और कुछ पश्चात् हम वैसे ही हो जाते हैं।

संकेत (Suggestion) क्या है ?—यदि मनुष्य अपने आपको स्वस्थ, निरोग, सामर्थ्यशील माने, निरन्तर इसी भावना का संकेत (suggestion) अपनी आत्मा को देता रहे, इसी विचार में पूर्ण निश्चय एवं विश्वास भर कर अपने आप को इसी की सूचना करे—तो वह अवश्य सामर्थ्यशाली बन जावेगा। आवश्यकता केवल निरंतर सूचना या संकेत देने की है। जितने परिपुष्ट संकेत होंगे, उतना ही महान् परिवर्तन, उतने ही उत्कृष्ट तत्त्वों की सिद्धि।

संकेत क्या हैं ? पुष्ट एवं दृढ़ विचार, स्पर्श, ध्वनि, शब्द दृष्टि तथा विभिन्न आसनों तथा क्रियाओं द्वारा किसी के मन पर प्रभाव डालने तथा अपनी इच्छा द्वारा कार्य सम्पन्न कराने का नाम संकेत करना है। संकेत ऐसे वाक्यों से किया जाता है जिन में अपूर्व दृढ़ता, गहन श्रद्धा, शब्द शब्द में शक्ति भरी रहती है। जिज्ञासु बारम्बार कुछ शब्दों, वाक्यों, तथा सूत्रों को लेता है, बारम्बार मस्तिष्क में उठाता है, उन पर विचार क्रिया दृढ़ करता है। पुनरावर्त्तन द्वारा कुछ काल पश्चात् ये विचार स्थायी स्वभाव में परिणत हो जाते हैं। मनको जिस प्रकार का प्रबोध बार बार दिया जाता है, कालान्तर में वही उसकी स्थायी सम्पत्ति हो जाती है। मन हमारे सम्पूर्ण कार्यों का ड्राइवर है। यह प्रचंड शक्ति वाला यंत्र है। विचारों का उत्पन्न, परिवर्तन परिवर्द्धन करने का कार्य भी इसी सञ्चालक द्वारा होता है। अतः संकेत का प्रभाव हमारे मन पर पड़ता है।

मन का प्रवाह, उसकी विभिन्न क्रियाएँ तीव्र गति से चलती हैं। ये विभिन्न क्रियाएँ हमारे शरीर, इन्द्रिय, मन, एवं बुद्धि इत्यादि प्रत्येक मनोभाव की अधिष्ठाता हैं। बिना इनके मतव्य के शरीर किसी कार्य में प्रवृत्त नहीं होता। जब तक संकेत (suggestions) दूसरे की मानसिक संस्थान के एक विशिष्ट भाग (Part & Parcel) नहीं बन जाते तब तक उनका कुछ प्रभाव नहीं पड़ता। यदि हमारा मन उन्हें स्वीकार कर ले, उन से तादात्म्य स्थापित कर ले, अपना क्रिया, व्यापार, व्यवसाय उनके अनुसार करने लगे तो वे संकेत सफल हो जाते हैं।

ये संकेत हमारे व्यक्तित्व के एक भाग बन जाते हैं, मानसिक क्षेत्र में दृढ़ता पूर्वक जम कर कठोर बन जाते हैं। तत्पश्चात् ये अपनी प्रतिक्रिया- Reaction प्रारम्भ करते हैं। ये संकेत शक्ति, सामर्थ्य के तत्त्व हैं. अन्तःकरण में आग्रह पूर्वक ये संकेत नवीन संस्कार उत्पन्न कराते हैं। पुराने संस्कारों को नष्ट इन्हीं के द्वारा किया जा सकता है।

जैसे कैस्ट्रायल पेट में प्रवेश करने के उपरान्त विजातीय तत्त्व को निकाल बाहर कर देता है उसी प्रकार मनः क्षेत्र में प्रवेश कर संकेत महान् आन्दोलन उत्पन्न कर देते हैं। पूर्व संस्कारों तथा इन नवीन संकेतों में एक संघर्ष उत्पन्न होता है। निश्चय बल

के अनुसार इस युद्ध में सफलता मिलती है। यदि हमारी पूर्व भावना बलवती हुई तो ये संकेत निष्प्रयोजन सिद्ध होते हैं, यदि इनके पीछे दृढ़ निश्चल विश्वास की बलवत्तर प्रेरणा विद्यमान रही तो इन संकेतों के अनुसार मानसिक निर्माण कार्य प्रारम्भ होता है।

संकेत कहां प्रभाव डालता है?—हमारे मनके दो स्वरूप हैं—एक चेतन (concious or objective) तथा दूसरा अचेतन (un-conscious- or subjective) यह सूक्ष्म कोष्टों (cells) से निर्मित हैं। मन की शक्ति इन कोषों पर ही निर्भर है। जिन्हें अपनी शक्ति वृद्धि इष्ट है उन्हें उस स्थान के इन कोषों की वृद्धि करनी चाहिए। चेतन मन हमारी बौद्धिक प्रगतिशीलता पर निर्भर है। जो कार्य हम नित्य प्रति सोच समझ कर करते हैं, जिस के पीछे हमारी चेतनता निरन्तर कार्य करती है, जिनका प्रभाव हमारे शरीर पर सीधा (directly) पड़ता है वे सब कार्य इस चेतन (nuconscious) मन द्वारा ही सम्पन्न होते हैं। हम जो काम सोच विचार कर, आगा पीछा सोचकर करते हैं वह यहीं से होता है। यह मन हमारी जाग्रतावस्था (consciousness) तथा चेतनता पर आश्रित है। बिना चेतन मन की आज्ञा के हमारी चेतन शक्तिएँ कार्य नहीं करेंगी।

अचेतन (unconscious) मन हमारी चेतना का दास नहीं। वह तो सर्वथा उन्मुक्त, स्वाधीन है। बिना चेतना की आज्ञा तथा आदेश के वह जो चाहे कर सकता है। वास्तव में मन का यह भाग हमारे बिल्कुल अधिकार में नहीं है वह जो जो कार्य किया करता है अपनी मर्जी से और कभी २ तो वह कार्य हमारी इच्छा के विपरीत होते हैं। हम नहीं चाहते कि वे हों, उसमें हमारी कामना, निष्ठा सहयोग तनिक भी नहीं होता तब भी यह अचेत मन निज मनमानी किया ही करता है

अचेत मन का एक विशिष्ट गुण यह है कि यह सोते जागते प्रत्येक अवस्था में कार्यशील (Active) रहता है। चेतन मन को हम जिस तरह चाहें दिशा परिवर्तन करा देते हैं किन्तु जब हम एक को आदेश दिया करते हैं तो द्वितीय निज मनोनुकूल जो चाहे करता ही रहता है। निश्चेष्ट चुप चाप नहीं बैठता, न कभी थकता ही है। ऐसा प्रतीत होता है मानों यह हम से निर्देश करता हो, "तुम अपना काम करो, हमें अपना कार्य करने दो।" अचेतन मन की उच्छृंखलता सचमुच अद्भुत है।

अचेतन मन ही परोक्ष तत्त्वों (Intuition) का केन्द्र स्थान है। हमारी प्रेरणाएँ (Onspirations) भी यहीं से उत्पन्न होती हैं। यद्यपि ये दोनों ही हमारे चेतन मन द्वारा प्रभावित होती है किन्तु इनका केन्द्र स्थान अचेतन जगत् ही है। इसी प्रकार अचेतन मन हमारी मूल प्रवृत्तियों (Instincts) तथा अनुभावों (Emotions) से अखंड रूप में सन्नद्ध है।

दमन—हमारी अनेक टूटी फूटी इच्छाएँ, प्रसुप्त वासनाएँ, अपूर्ण वृत्तिएँ इसी अव्यक्त मन में छुप जाती हैं। जब कभी कोई बात वस्तु जगत् में पूर्ण न हुई या अवरोध उत्पन्न हुआ तो ये वृत्तिएँ दब जाती हैं। किन्तु दबने (suppression) का अर्थ यह नहीं कि ये सर्वथा गायब ही हो जाँय। ये कभी लुप्त नहीं होती प्रत्युत जब तक जागृत मन का प्रभुत्व अधिक होता है, कुछ काल के निमित्त एक ओर चुप चाप बैठ जातीं हैं। जैसे एक शक्तिशाली सम्राट् के राज्य में उसके आतंक से प्रतिद्वन्द्वी दब जाते हैं कुछ द्वन्द्व नहीं करते किन्तु उसका आतंक हटने से पुनः विरोध करते हैं उसी प्रकार जागृत मन के प्रभुत्व रहने तक तो ये कुछ नहीं बोलती, चुपचाप पड़ी रहती हैं किन्तु उसके प्रभुत्व के क्षीण होते ही ये प्रसुप्त चित्त वृत्तिएँ एक दम शक्तिशालिनी हो उठती हैं अति सूक्ष्म रूप, विशाल काय रूप धारण

र लेता है। फिर तो जागृत एवं इन प्रसुप्त वासनाओं में भयङ्कर संघर्ष प्रारम्भ होता है। व्यक्त तथा अव्यक्त के वैमत्य का सम्बोधन ही अन्तर्द्वन्द्व है। इस घात—प्रतिघात से ही मनोरोगों की उत्पत्ति होती है।

अन्तर्द्वन्द्व का कारण—सामाजिक रूढ़ियां इतनी जटिल तथा सख्त हैं कि हमारी उचित अनुचित इच्छाओं की पूर्ति संभव नहीं। अपयश, सामाजिक टीका टिप्पणी के विचार से हम उद्भूत वासनाओं को छिपाना चाहते हैं। हमारी विवेक बुद्धि दुर्वासना को व्यक्त नहीं होने देती। अतः ये वासनाएं चेतन मन से अचेतन में जा छुपती हैं। ये जब तक परितृप्त न हो जांय तब तक शान्त कदापि न होंगी। अतएव रेंगती हुई ये अव्यक्त मन में बीज रूप से छुपी रहती हैं। प्रसुप्तावस्था में चेतन मनमें प्रविष्ट हो जाती हैं और हमारी विवेक बुद्धि से द्वन्द्व करती प्रत्येक वासना परितृप्ति का प्रयत्न करती है जब तक वह पूर्णतः तृप्त नहीं हो जाती लुप्त होती। छोटी अथवा वृहत् मात्रा में वर्तमान रहती है। कभी क्षीणतर कभी प्रबलतर हुआ करती हैं।

स्वप्न में संघर्ष—अव्यक्त की प्रसुप्त वासनाएँ समाज के डर से स्वप्न में निरन्तर निकला करतीं हैं। स्वप्न में चेतन अथवा व्यक्त मन तो निष्क्रिय हो जाता है किन्तु अव्यक्त (Unconseivus) मन रुकी हुई वासनाओं को आगे बढ़ाता है। ये क्रान्तिकारी वासनाएँ स्वप्न में भयङ्कर ताण्डव करती हैं तथा अनुकूल परितृप्ति पाती हैं। ज्यों ज्यों ये परितृप्त का मार्ग ग्रहण करती हैं त्यों त्यों इन्हें एक निर्धारित मार्ग का अवलम्बन करना पड़ता है इस विशिष्ट मार्ग की बागडोर अहङ्कार के आधीन है। अहङ्कार को विवेक बुद्धि चेतन मन) के आधीन रहना पड़ता है। अतः प्रसुप्त वासनाएँ चेतन जगत् (Focus of of the mind) में रेंगती आती हैं पर डरती रहती हैं। इस प्रकार चेतन जगत् में चुपचाप चली आने पर अहङ्कार से इनका संघर्ष होता है। अहङ्कार अपने अनुकूल वातावरण के अनुसार अव्यक्त वासनाओं को परितृप्त या नियंत्रित करता है। स्वप्न में देशकाल परिस्थिति की मर्यादा को तोड़कर जो वासनाएँ किंचित काल के लिए शान्त होना चाहती हैं वे पुनः अहंकार द्वारा कुचल दी जाती हैं। जब मनुष्य का चेतन मन अचेतन का तिरष्कार करता है तो व्याधि की उत्पत्ति होती है।

(क्रमशः)

मैं विकसित होरहा हूं।

(ले० श्रीयुत महेश वर्मा)

हमारा शारीरिक विकास प्रायः हमारे मानसिक दृष्टिकोणों पर निर्भर रहता है मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि मन को एकाग्र किए बिना किसी प्रकार का अभ्यास उत्तम रीति से नहीं हो सकता और सचमुच यह कथन है भी सत्य। अधिक गहन पथ पर अग्रसर होने से प्रथम दैनिक जीवन पर ही दृष्टि डालिए। परमात्मा का स्मरण करते समय यदि मन एकाग्र नहीं तो ढोंग से क्या लाभ? निज शारीरिक उन्नति के प्रति जैसी हमारी भावना होगी वैसा ही मधुर अथवा कटु उसका परिणाम होगा। यदि हम प्रतिदिन व्यायाम करते समय इस विचार को हृदय में स्थान दे सकें कि हमारे शरीर के प्रत्येक अङ्ग प्रत्यङ्ग का भली प्रकार विकास हो रहा है तो निश्चय जानिये आप का यह विचार निर्मूल सिद्ध न होगा तथा आप को शीघ्र ही इस कथन की यथार्थता पर विश्वास हो जायगा। अस्तु, यदि व्यायाम कर उचित लाभ उठाना चाहते हो तो आपके अङ्ग प्रत्यङ्ग उत्तरोत्तर विकसित हो रहे हैं, ऐसी धारणा बना लीजिए।

श्री गायत्री सिद्धि।

(पं० शम्भुप्रसाद मिश्र भू. पू. चेयरमैन डि. बो. मंडला)

ॐ गायत्रीं त्रिऽक्षरांबालाम् साक्ष सूत्र कमंडलम्।
रक्त वस्त्रां चतुरवक्त्रां हंसवाहने संस्थिताम्॥
ब्रह्माणीं ब्रह्मदेवत्याम् ब्रह्मलोक निवासिनीम्।
आवाह्यामहं देवी मायांतीम् सूर्य मंडलात॥
आगच्छ वरदे देवी त्रिऽक्षरे ब्रह्मवादिनी।
गायत्री छंद सांमातर्ब्रह्मयोने नमोस्तुते॥

प्रातः सायं-संध्या पूजन में श्री गायत्री जी का उपरोक्त ध्यान करना मेरा नित्य-कर्म है। यद्यपि त्रिकाल संज्ञा में गायत्री, सावित्री, सरस्वती ये तीन ध्यान गायत्री के प्रत्येक पृथक हैं पर मेरे हृदय में यही एक उपरोक्त ध्यान दोनों काल की संध्या में बसा हुआ है। इसके सिवाय सन् १९३० ई० में कृष्ण मन्दिर (मंडला जेल) के अन्दर मैंने भाषा में श्री गायत्री ध्यान व स्तोत्र लिखा था। यह ध्यान व स्तोत्र भी नित्य सूर्योदय से पूर्व अपने बिस्तर में ही विनीत करता है। भाषा स्तोत्र का शाँति में विनीत ने सवा लक्ष गायत्री जप ब्राह्म मुहूर्त में कृष्ण मन्दिर में किया था जिसका प्रत्यक्ष असर तो यह था कि विधर्मी बड़े २ अफसर भी विनीत के प्रति बड़े नम्र आदरणीय भाव रखते, रसोइया ब्राह्मण दिया, पानी के लिये अहीर दिया, मकर संक्राँति आदि पर्वों को नर्मदा स्नान जेलर के साथ जाकर करने की आज्ञा श्री [illegible] स्तोत्र करने से ३ माह के अन्दर गाँधी इर[illegible] भौते के नाम पर विनीत बिला शर्त छोड़ [illegible]। श्री गायत्री इष्ट के कई चमत्कार [illegible] अनुभव हुए व होते हैं। यथा स्वप्न में वही उपरोक्त ध्यान स्वरूप श्री गायत्री जी लाल वस्त्र धारण किये हुए तेजोमय दिव्य रूप में दर्शन जब कभी देती हैं तब बड़े हानि-लाभ व जीवन मरण की बातों का जो भविष्य में आने वाली हैं उनका दिग्दर्शन यानी रक्षा का मार्ग बतलाती हैं। स्वप्न में ऐसे दर्शन श्री गायत्री जी के कई बार हुए हैं यह बिलकुल सत्य बात कह रहा हूँ।

एक बड़ी असाध्य बीमारी से मेरी रक्षा गायत्री इष्ट द्वारा कुछ वर्ष पूर्व हुई है। पारसाल में मृत्यु शैया पर था मैं जीवन की आशा छोड़ रहा था कि गायत्री इष्ट से मेरी प्राण रक्षा हुई। अभी हाल की बात है मेरा पुत्र चि. रामेश्वरप्रसाद मिश्र सन्निपात से सख्त बीमार हो गया, डाक्टर वैद्य सभी को बीमारी चिन्ताजनक थी घर के लोग भी रोने पीटने के सिवाय असहनीय कष्ट में रात दिन दुखी थे, मैंने अपना प्रसिद्ध गायत्री मंत्र इष्ट का आधार लिया और नित्य पूजन के बाद गायत्री मंत्र से लड़के को झाड़ना शुरू किया, लड़का चि० रामेश्वरप्रसाद कुल १७ दिन की लाङ्घन के बाद शनैः शनैः राग मुक्त हो गया। संसारी व्यवहार में भी श्री गायत्री इष्ट द्वारा महान सफलता व शक्ति प्राप्त होने का अनुभव हुआ है। सन् १९३३ में जब मैं मंडला डिस्ट्रक्ट बोर्ड के चेयरमैनी के लिये खड़ा हुआ तो मेरे खिलाफ एक बड़े जमींदार जो जिला के राजा कहे जाते हैं खड़े हुए। उनकी पैरोकारी में बड़े बड़े प्रभावशाली व्यक्ति वकील आदि भी थे, उन राजा साहब के मुकाबिले न पैसा में और न कार्यकर्त्ताओं में, मैं कोई चीज नहीं था पर श्री गायत्री जी की कृपा से विपक्षी के सभी अस्त्र बेकाम हो गये और मैं बिना विरोध चेयरमैन डिस्ट्रक्ट बोर्ड चुन लिया गया। इसी सिलसिले में कुछ दिनों बाद विपक्षी दल की साजिश से एक भारी रकम मुझ पर सर चार्ज हुई। प्रान्तीय सरकार की आज्ञा से सरचार्ज में मेरी गैरमनकूला जायदाद की कुर्की की कारवाई शुरू हो गई, विपक्षी दल के यहां महान खुशी व मेरे यहां महान दुख मनाये जाने लगे, ऐसे सङ्कट के समय में मेरा एक मात्र आधार गायत्री माता ही थीं। मैंने उन्हीं के भरोसे इस आपत्ति व मामले का सामना किया। आखिर को प्रांतीय सरकार ने अपनी कुल कार्रवाई को रद्द कर दिया। और

तुम्हारा स्वरूप ही आनंदमय है.

(लेखिका—कुमारी कैलाश वर्मा)

प्रगतिशीलता के वर्तमान युग में जहाँ प्रायः पद पद पर सङ्घर्षों का सामना करना पड़ता है हर्ष किसे और क्योंकर प्राप्त हो सकता है ? यह प्रश्न किसके सम्मुख नहीं है । क्या पुस्तकों के ढेर से, महात्माओं के संयोग से अथवा एकाकीपन से यह प्रश्न हल हो सकता है ?

पवित्र भावनाये, पवित्र हृदय, और पवित्र वातावरण हर्ष का सृजन करते हैं । हर्ष सत्य है और स्थिर है, हां कभी कभी क्षणिक दुखों की रेखा का आह्वान हो ही जाता है । कोई भी वास्तविक पदार्थ नष्ट नहीं हो सकता और फिर हर्ष तो वास्तविकता और स्थिरता के गहन बन में निवास करता है । संतोष और निस्वारथ यही तो हर्ष के क्षेत्र हैं । सदैव सन्तोषी बने रहिये, अपने कर्तव्यों और अधिकारों स्वार्थ रहित होकर शान्त वातावरण में पूर्ण-ण उपयोग कीजिये आपको विशेष प्रसन्नता का अनुभव होगा, विश्वास रखिये ! यही हर्ष है ।

यद्यपि स्थायी हर्ष की प्राप्ति में कुछ कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है । जिनका अन्त हर्ष में ही होता है । मानवीय पौधा विश्व की स्वतंत्र वायु में पल कर बड़ा होता है मध्य में अनेक कठिनाइयाँ उपस्थित होती हैं । स्वार्थ और अज्ञानता की मिट्टी उसे प्रकाश में आने के लिये कितनी रुकावटें डालती हैं परन्तु अंत में स्वार्थशून्य और पवित्र जीवन-पुष्प कितनी शीघ्रता से शून्य वातावरण को आलोकित कर देता है ।

विपत्तियों को भी पूरी लथेड़ आई । इस तरह मेरे जीवन में गायत्री इष्ट के चमत्कार की अनेक घटनाएँ घटित हुई हैं । यहां मैंने बड़े संक्षेप में आचार्य श्रीराम जी शर्मा अपने प्रिय बंधु के अनुरोध पर लिख भेजा है ।

सच्चा परोपकार ।

(श्री. सत्यनारायण जी मूधड़ा, हैदराबाद)

परोपकार और पुण्य के नाम पर मनुष्य कुछ धार्मिक कर्मकाण्ड, थोड़ा सा दान या कोई ऐसा काम करते हैं जिसे बहुत से लोग देखें और प्रशंसा करें । कई ऐसे आदमी जिनका नित्य का कार्य-क्रम लोगों का गला काटना, झूँठ, फरेब, दग़ाबाज़ी, बेईमानी से भरा होता है, अनीति पूर्वक प्रचुर धन कमाते हैं और उसमें से एक छोटा सा हिस्सा दान पुण्य में खर्च करके धर्मात्मा की पदवी भी हथिया लेते हैं ।

तात्विक दृष्टि से विचार करने पर स्पष्ट होजाता है कि ऐसा धर्म सञ्चय वास्तविक धर्म सञ्चय नहीं है । यह तो प्रतिष्ठा बढ़ाने और वाहवाही लूटने का एक सस्ता सा नुसखा है । वास्तविक धर्म का आस्तित्व अन्तरात्मा की पवित्रता से संबंधित है । जिसके मन में सच्चे धर्म का एक अंकुर भी जमा है वह सबसे पहला काम 'अपने आचरण को सुधारने" का करेगा । अपने कर्तव्य और जिम्मेदारी को भली भांति पहचानेगा और उसे ठीक रीति से निवाहने का प्रयत्न करेगा ।

परोपकार करने से पहले हमें अपने मनुष्योचित कर्तव्य और उत्तरदायित्व को उचित रीति से निवाहने की बात सोचनी चाहिए । भलमनसाहत, का मनुष्यता का, ईमानदारी का, वर्ताव करना और अपने वचन का ठीक तरह से पालन करना एक बहुत ही ऊँचे दर्जे का परोपकार है । एक पैसा या पाई किसी भिखमंगे की झोली में फेंक देने से या किसी को भोजन वस्त्र बाँटने देने मात्र से कोई आदमी धर्म की भूमिका में प्रवेश नहीं कर सकता । सच्चा परोपकारी तो वह कहा जायगा जो स्वयं मानवोचित कर्तव्य धर्म का पालन करता है और ऐसा ही करने के लिए दूसरों को भी प्रेरणा देता है ।

ईश्वर अनुभव गम्य है।

(श्री. के० व० किल्लेदार लश्कर)

बहुत से मनुष्य परमात्मा को आंखों से देखना चाहते हैं। न दिखाई देने पर उसके अस्तित्व में शङ्का करते हैं। ऐसे व्यक्तियों को यह जान लेना चाहिए कि मनुष्य के नेत्रों की शक्ति बहुत ही न्यून है, उससे सूक्ष्म वस्तुऐं दिखाई नहीं पड़ती हैं और अनेक बार स्थूल वस्तुऐं भी दिखाई नहीं पड़तीं।

ऐसे कई कारण हैं जिनके कारण वे स्थूल वस्तुऐं जिनका अस्तित्व मौजूद है हमें दृष्टिगोचर नहीं होती (१) बहुत दूर होने के कारण—कोई पक्षी उड़कर दूर चला जाता है तो वह दिखाई नहीं देता (२) समीप होने के कारण—आंखों में लगा हुआ काजल, पलक आदि आंखों के बहुत समीप होने के कारण दिखाई नहीं देते (३) इन्द्रिय दोष के कारण—जैसे अन्धे को वस्तुऐं नहीं दीखती (४) मन की विशेष दशा के कारण—किसी कार्य में बहुत तल्लीनता से लगे हुए हों तो सामने से गुजरने वाली चीजों का पता नहीं रहता। (५) सूक्ष्म होने के कारण—रोगों के कीटाणु, पदार्थों के परमाणु, वायु की लहरें, शब्दों का कम्पन सूक्ष्म होने के कारण नहीं दीखते (६) व्यविधान के कारण—किसी आड़ में होने के कारण वस्तुऐं नहीं दीखती, पर्दे के पीछे रखी हुई, जमीन में गढ़ी हुई सन्दूक में बन्द वस्तुऐं होते हुए भी मालूम नहीं पड़ती (७) तिरोभाव के कारण—किसी विशेष कारण से, जैसे दिन में सूर्य के प्रकाश के कारण तारागण दृष्टिगोचर नहीं होते। (८) स्व-जाति संमिश्रण के कारण—जैसे नदी का जल, समुद्र के जल में, मदिरा साधारण पानी में एवं दूध में जल मिल जाने के कारण फिर उनका अस्तित्व प्रथक दृष्टिगोचर नहीं होता। इस प्रकार नेत्रों की तुच्छ शक्ति से बहुत सी स्थूल वस्तुऐं भी दृष्टिगोचर नहीं होती फिर परमात्मा जैसा सूक्ष्म तत्व जो केवल अनुभवगम्य है दिखाई न दे तो भ्रममें न पड़नाचाहिये।

जीवितों की जिन्दगी जिओ।

(प्रिन्स क्रोपाटिकन)

यदि तुम अनुभव करते हो कि मैं जीवित हूं, जवान हूं और क्रियाशील हूँ तो उठो जीवित मनुष्यों की जिन्दगी जीने का प्रयत्न करो। निर्दोष, सर्वाङ्ग पूर्ण, आनन्द मय और उन्नतिशील जीवन पसन्द करो। जीवित प्राणियों की स्वाभाविक इच्छा मजबूत बनने की, महान बनने की और सुखी बनने की होती है, तुम्हें भी ऐसी ही आकांक्षाओं से भरा पूरा होना चाहिए।

उठो, अपने चारों ओर नव जीवन के बीज बोओ। पवित्रता का वातावरण निर्माण करो। यदि तुम दूसरों को धोखा दोगे, झूठ बोलोगे, षड्यंत्र रचोगे, ठगोगे तो इससे अपने आप को ही पतित बनाओगे, अपने को ही छोटा, तुच्छ और कमीना साबित करोगे। किसी दूसरे का अपनी सारी शक्तियां लगाकर भी तुम अधिक अनिष्ट नहीं कर सकते परन्तु इन हरकतों से अपना सर्वनाश जरूर कर सकते हो।

ईमानदारी पर कायम रहो और उचित साधनों से अपनी उन्नति के लिए प्रयत्न करो। अपनी ताकत को संसार के सामने प्रकट करो क्योंकि बलवानों को ही सुखी और उन्नतिशील जीवन जीने का अधिकार है। यदि अपनी शक्ति का कोई सबूत पेश नहीं कर सकोगे तो दुनियां तुम्हें एकअसहाय, अनाथ, दुर्बल और अभागा समझेगी और तुम्हारे नाम के साथ 'बेचारा' की उपाधि जोड़ देगी।

इसलिए मैं कहता हूं कि—संघर्ष करो! जीवित रहने के लिए संघर्ष करो!! अपने अधिकारों को प्राप्त करने और उनकी रक्षाके लिए संघर्ष करो!!! विश्वास रखो इस आत्मोन्नति के धर्मयुद्ध में तुम्हें वह आनंद मिलेगा जो दुनियां की और किसी चीज से नहीं मिल सकता। जीवितों की भाँति जीवित रहने के चन्द घण्टे, मुर्दा जिन्दगी के हजार वर्षोंसे बहतर हैं।

आत्म त्यागी की निष्ठुरता।

(रा० कु० रत्नेशकुमारी 'ललन' मैनपुरी स्टेट)

एक दिवस मैंने दीपक से पूँछा—"तुम इतनी निष्ठुरता क्यों करते हो ? बेचारे पतंगे तुम से अभिन्नता लाभ करने की चेष्टा में आत्म बलिदान कर देते हैं, पर तुम उनके इस प्राणोत्सर्ग की नितान्त उपेक्षा सी करते हुए "स्व" में ही निमग्न सदैव एक रस रहते हो। क्या उनके इस आत्मोत्सर्ग का तुम्हारी दृष्टि में किंचित मात्र भी मूल्य नहीं ? उनके सर्वस्व समर्पण से भी तुम्हारी निष्ठुरता बड़ी है ? उनका यह सर्वस्व बलिदान भी तुम्हारे हृदय को विचलित नहीं कर पाता ? कोई प्रभाव नहीं छोड़ जाता ? उस पर भी अखिल विश्व तुमको स्नेह जीवी कहता है, धन्य हो तुम दीपक ! और धन्य तुम्हारी कठोरता।

मेरी बातें धैर्य पूर्वक सुनकर दीपक करुणोत्पा-भाव से मुस्कराया! बोला—'यदि तुम विवशता निर्दयता कहो तो अपना वश ही क्या है ? जलना ही मेरा जीवन है अगर कोई मुझ से अभिन्न ना चाहे तो जलने से उसे मैं कैसे बचा सकता हूं ? तंगे जब २ जलने आते हैं मैं उनसे सकरुण हृदय से साग्रह अनुरोध करता हूं, "प्रिय ! तुम दूर ही रहो क्यों व्यर्थ मेरे साथ जलते हो ! मुझे ही अकेले जलने दो मित्र !

तब वे आदत मन से कह उठते हैं—"देव ! हम जानते हैं जो अन्धकार से त्रस्त हैं अथवा पथ भ्रष्ट होकर भटक रहे हैं उनको आपके समान प्रकाश दे सकने की हम क्षुद्र जीवों में सामर्थ्य ही कहां ? पर क्षण भर को अपने पावन प्रकाश से अभिन्न होकर के हमें प्रकाशित तो हो जाने दीजिये ! खाने पीने सोने तथा आमोद प्रमोद में ही तो जीवन की सार्थकता नहीं ! अन्धकार में दीर्घ जीवन प्राप्त करने की अपेक्षा क्या प्रकाश प्राप्ति की चेष्टा में मरना श्रेष्ठ नहीं है ? कौन जाने हमारी ये तपस्या ये आत्म विसर्जन अगले जन्म में हमें आपके पद चिन्हों पर चल सकने के योग्य बना दे ! किसी की भी अनन्य अभिलाषा, पूर्ण प्रयत्न, अथक उत्साह, और सर्वस्व बलिदान व्यर्थ नहीं जाता फिर आप स्वयम् आदर्श स्वरूप होकर हमें श्रेय प्राप्ति के प्रयत्न से क्यों विरत करते हैं ? जीवन के श्रेष्ठ लक्ष्य से भटकने की प्रेरणा क्यों देते हैं ? आप का कर्तव्य तो पथ प्रदर्शन है।

उनकी इन युक्त सङ्गत बातों को मैं अस्वीकार नहीं कर पाता। क्या यही मेरी निर्ममता का प्रमाण है ? तुम कैसे जानती हो, उनके प्राण विसर्जन का मेरी दृष्टि में कोई मूल्य नहीं ? क्या मेरे पास अश्रु प्रवाह और करुण विलाप की शब्द व्यञ्जना नहीं इसी से तुम मेरी सहृदयता पर सन्देह करती हो ? अश्रुओं का कोष मेरे पास नहीं इसके लिये तो मैं जगत् नियन्ता का सम्पूर्ण हृदय से आभारी हूं नहीं तो जल ही कैसे पाता ? अश्रु बरस कर मेरी हृदयाग्नि को शान्त न कर देते ? और यदि जलता ही नहीं तो प्रकाश दान करके जीवन सफल भी कैसे कर पाता ? किसी के लिये कुछ भी न कर पाता तब तो पृथ्वी पर केवल भार स्वरूप ही रहता ! और विलाप ? उनको क्षण भर प्रकाश प्राप्ति की कामना में जलते देखकर मेरी जीवन ज्योति तक थर्रा उठती है उन दग्ध प्रायः श्रेय प्राप्ति के हेतु बलिदान हुए पतंगों को अपने स्नेहपूर्ण हृदय में किस भाव से विभोर होकर स्थान देता हूं इसे प्रगट कर सकने की मेरे आहत हृदय में शक्ति नहीं और न प्रदर्शन करने की लालसा ही। तुम मुझे निर्मोही, निर्दय समझती हो, समझाती रहो, सारा संसार ही समझता है। मुझे किसी से कुछ भी शिकायत नहीं। अन्तर्यामी ही जानते हैं वही निर्णय कर सकेंगे कि क्या मैं सचमुच ही हृदय हीन हूं ?

मैं दीपक की हृदय-स्पर्शिनी बातों को सुनकर कुछ क्षण तो आश्चर्य की अधिकता से अवाक् रह गई फिर श्रद्धा पूर्वक मस्तक नवाकर मैंने आत्म

(शेष पृष्ठ ५० पर पढ़िये)

आध्यात्मिक दृष्टिकोण से सिद्धियां ।

(श्री० मोहनलालजी वर्मा एम. ए. एल. एल. बी.कोटा)

———

मनुष्य को अपने महान् तेज एवं सामर्थ्य का तब तक ज्ञान नहीं होता जब तक उसे आत्म-भाव की चेतना तथा आत्म तत्त्व का बोध न हो जाय। आध्यात्मिक दृष्टिकोण हो जाने के उपरान्त मनुष्य के जीवन में एक महान् परिवर्तन होता है। उसे ऐसा प्रतीत होता है मानों वह अन्धकार से दिव्य प्रकाश में आ गया हो, अथवा घोर स्वप्नावस्था से जागृति में आ गया हो। जिन क्षुद्र तनिक तनिक सी बातों पर उथले व्यक्ति नित्य प्रति दुःख क्लेश भोगते तथा लड़ते झगड़ते हैं, वे आत्म परिचय-सम्पन्न सिद्ध को वस्तुतः अत्यन्त तुच्छ, क्षुद्र, तथा सार-विहीन प्रतीत होती हैं। कारण वह अपने अन्तःस्थित आत्मा के विकास के कारण विक्षेप रहित, शान्त तथा उद्वेग से मुक्त रहता है तथा अपने ईश्वरत्व सत् चित आनंद में निवास करता है।

आध्यात्मिक दृष्टिकोण को प्रकट करने वाला एक अत्यन्त संक्षिप्त साधन है — और वह है अपनी आत्मा का विकास। शक्ति का एक बृहत परिणाम इस भंडार में एकत्रित है उसे सङ्कल्प (Determination) सूचना (suggestion) तथा मनोबल (will-power) से विकसित करना पड़ता है। अपनी आत्मा को दिव्य शक्तियों की अभिवृद्धि करने का प्रत्येक व्यक्ति को पूर्ण अधिकार है। हमारी आत्मा में महान् शक्ति इसी लिए दी गई है कि हम उसका जितना भी संभव हो सदुपयोग करें, उससे यथेष्ट लाभ उठावें और उस अनन्त चेतन तत्त्व की समीचीन रूप से अभिवृद्धि करें।

ज्यों ज्यों तुम अन्तरात्मास्थित सामर्थ्यों को प्रकट करोगे—अतिष्करण करोगे त्यों त्यों शरीर से पृथक्. इन्द्रियों तथा मनोविकारों से मुक्त हो विशेष रूप से महत् बनते जाओगे। ये दिव्य शक्तिएँ तुम्हारे अन्तर्मन में अज्ञान वश सुप्त पड़ी हैं, केवल उन्हें जागृत भर करने की आवश्यकता है। ध्यान तथा मनन से इन शक्तियों को सरलता पूर्वक [illegible] किया जा सकता है। ध्यान के बिना हम अ[illegible] आत्मा को शक्ति नहीं दे सकते। संसार के उत्[illegible] उत्तम मानसिक अभ्यास करने वालों का वि[illegible] है कि ये शक्तियां निरन्तर अभ्यास, व्य[illegible] अभ्यास द्वारा बढ़ाई जा सकती हैं। अभ्यास द्वारा जितने अंशों में हम निज आत्मा का विकास कर सकेंगे, उतने ही अंशों में उसका यथार्थ उपयोग भी कर सकेंगे।

कितने ही व्यक्ति यह समझ बैठते हैं कि हम कुछ भी दिव्यता प्राप्त नहीं कर सकते। साधारण व्यक्तियों की सम्मति है कि प्रतिभा, सिद्धियां, या शक्तियां ईश्वर प्रदत्त प्रसाद है तथा ईश्वर के अनुग्रह मात्र हैं। क्या तुम भी ऐसा ही सोचते हो? क्या ये प्राचीन रूढ़ियां तुम्हें भी परस्त कर रही हैं?

आज के दार्शनिक कहते हैं प्रत्येक मनुष्य अलौकिक शक्तियां प्राप्त कर सकता है। कुछ में अलौकिक शक्तियां हों, और कुछ में वे बिल्कुल न हों—सो बात नहीं है। मनुष्य उत्तम व्यापारी,लेखक, वक्ता, कवि, कलाभिज्ञ एवं जिस विद्या में भी सिद्धि प्राप्त करना चाहे अन्तरात्मा में दृढ़ निश्चय से बन सकता है। सिद्धि की शक्ति के निमित्त अन्तरमन को अधिकाधिक जागृत, पुष्ट, एवं सम्पन्न करने की आवश्यकता है। प्रत्येक बात जो आत्मा में प्रकट होती है — उत्तम प्रकार से उपयोग करना सीखो और तुम में अधिक कार्य करने की कुशलता प्राप्त होगी।

प्रकृति ने मनुष्य को अपनी इच्छा—सिद्धि के निमित्त यथेष्ट साधन और सामर्थ्य प्रदान किये हैं। मनुष्य का स्वभाव ज्यों ज्यों विशुद्ध आत्मिकभाव और पवित्र आत्मिक दृष्टिकोण को बढ़ाता जाता है

त्यों त्यों उसमें ज्ञान रूपी दीपक का प्रकाश, सामर्थ्य, पुष्ट मनोबल भी बढ़ते जाते हैं। उसके अन्तःकरण का प्रगाढ़ अज्ञान तिमिर नष्ट हो जाता है। मन की त्तियों का भयङ्कर उत्पात, निरन्तर चाचल्प, दारुण प्रहार दूर हो जाता है। वह जगत् के मिथ्या प्रपञ्चों, थोथे प्रतिबंधों से मुक्त होकर अलभ्य सामर्थ्य प्राप्त करता है। फिर उस पर विक्षेप का बल प्रहार जादू कदापि नहीं चल पाता।

ज्ञान की सद्भावना एवं धारणा द्वारा आन्तरिक सामर्थ्य उद्भासित हो उठते हैं और प्रत्येक मनुष्य हमारी ओर आकर्षित होता है। आध्यात्मिक दृष्टिकोण का अर्थ है मन की उच्च भूमिका में प्रवश करना। आत्मा के बिल्कुल समीप, इससे सलग्न मन की सर्वोच्च भूमिका है। वहां ही अप्रतिम वस्तुओं का अखंड सद्भाव रहता है। इस उच्च प्रदेश के चिंतवन मात्र ही पूर्ण रूप से निर्मल है। उच्चतम प्रदेश में जाने का मार्ग मानस-प्रदेश-रियों को अभ्यास व मनोबल से मिल जाता त्येक व्यक्ति को अपनी आत्मा में अधिकाधिक ग्रह करना अपेक्षित है। इस बल को प्राप्त बड़ी से बड़ी सिद्धि है।

प्रकार भोजन करने के पश्चात् अन्य कुछ क्षुधा नहीं रह जाती। और सुस्वादु एवं भोजन सामने लाने से भी उसे खाने की हीं होती, उसी प्रकार आध्यात्मिक भोजन के बाद इन्द्रियों का परिमित आनन्द फीका मालूम पड़ता है। इधर उधर बाहर होने वाला ज्ञान सच्चा वास्तविक ज्ञान इसकी प्राप्ति से आन्तरिक शान्ति प्राप्त । सच्चा ज्ञान तो आत्मानुभूति से ही य है।

म आत्मा के अन्दर प्रवेश करो। वही स्तविक स्वरूप सत चित आनन्द परम है। वहीं तुम्हें सत्य ज्ञान उपलब्ध हो क्योंकि तथा अज्ञान-जन्य निश्चयों से मुक्ति के तत्त्व आत्मा के अन्दर प्रवेश करने पर ही प्राप्त हो सकेंगे। वृत्तियों को अन्तर्मुखी करने से तुम्हारा मन पवित्र हो जायगा और इन्द्रियां परिश्रान्त हो जाएँगी। चित्तात्मा में अन्तर्ज्योति चमकने लगेगी और सर्वात्म दृष्टि की प्राप्ति हो जायगी।

भूला हुआ व्यक्ति पूर्व सञ्चित अज्ञान के कारण देह पूजा में निरत रहता है, विषयों के प्रति अत्यन्त आसक्त बना रहता है, क्षण क्षण परिवर्तित, देशकाल से परिच्छिन्न, अनित्य, विनाशी, दुःख के हेतु मिथ्या अभिमान में लिप्त रहता है। संसार की कुटिल वासनाएँ, रसनेन्द्रिय के क्षणभंगुर विषय, उसे पल पल प्रलोभन देकर अस्थिर किया करते हैं। संसार के विषम आन्दोलन उसे अशान्ति के जलनिधि की उत्ताल तरङ्गों में इधर से उधर फेंका करते हैं किन्तु, जो बुद्धिमान पुरुष आध्यात्मिक दृष्टिकोण प्राप्त कर लेते हैं वे इन क्षण भंगुर पदार्थों में कभी आसक्त नहीं होते। उन्हें प्रतीत हो जाता है कि शाश्वत अनित्य पूर्व स्थिर वस्तु ता एक वह आत्मा ही है। वही अटल है सत्य है पूर्ण सनातन है। अतएव ज्ञान की दृष्टि से आध्यात्मिक दृष्टिकोण अद्वितीय आश्रय है। यह अन्तर्दृष्टि प्राप्त कर लेने से राग द्वेषादि सम्पूर्ण अनर्थों का मूलोच्छेद हो जाता है। यही दिव्य प्राप्ति परम आनन्द ब्रह्म के परम अनुकूल है।

आत्म दृष्टि की प्राप्ति पर रोग, दुःख शोक, जय पराजय मान अपमान, तृषा, क्षुधा, हर्ष, शोक, हमारी आत्मा में विक्षोभ उत्पन्न नहीं कर सकते। आत्मा के जानने पर क्या नहीं जाना जाता? आत्म प्रतीति के पश्चात् क्या अवशेष रह जाता है?

जो सनातन सुख है, जो समग्र विश्व में प्रतिच्छाया रूप से वर्तमान है, जो अपनी उन्मुक्तता से सर्वत्र प्रशान्त प्रकाश विकीर्ण करता है, जो अन्धकार के गहन कूप से निकाल कर हमें अद्वितीय परम-आत्मा का पवित्र दर्शन कराता है वह स्थिति प्राप्त कर लेना ही आध्यात्मिक दृष्टिकोण है। यही

परम, शाश्वत एवं अटल सत्य है। इस सत्यको अपना कर आत्मा में प्रवेश करने से ही सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि की उपलब्धि होती है, ज्ञान चक्षु खुलते हैं और मनुष्य को अपने वास्तविक स्वरूप का भान होता है। आध्यात्म-भावना का दृढ़ संस्कार करने के लिए निम्न प्रयोग बड़े आश्चर्यजनक हैं:—

आध्यात्म-भावना की सिद्धि के उपाय—प्रति दिन प्रातःकाल अथवा सायंकाल एकान्त स्थान में चले जाओ। तुम्हारा चित्त चञ्चल या आकर्षित करने का कोई साधन न हो। शान्त चित्त से नेत्र मूँद कर बैठ जाओ। क्रमशः अपने मन की क्रियाओं का निरीक्षण करो। इन सब विचारों को एक एक करके निकाल डालो यहां तक कि तुम्हारे मन में कुछ भी न रहे। वह बिल्कुल साफ हो जाय। अब दृढ़ता पूर्वक निम्न विचारों की पुनरावृत्ति करो—

"मैं आज से एक नवीन मार्ग का अनुसरण कर रहा हूं पुराने त्रुटियों से भरे हुए जीवन को सदा सर्वदा के लिए छोड़ रहा हूं। दोष पूर्ण जीवन से मेरा कोई सरोकार नहीं। वह मेरा वास्तविक स्वरूप कदापि नहीं था।"

"अब तक मैं शृङ्गार, देह पूजा, टीप टाप में ही सलग्न रहता था। दूसरों के दोष निकालने, मजाक उड़ाने, त्रुटियों, कमजोरियों के निरीक्षण तथा आलोचन करने में रस लेता था, पर अब मैं इस अन्धकार मय कूप से निकल गया हूं। अब मैं इन क्षुद्र उलझनों में नहीं पड़ सकता। ये अभद्र भ्रान्तिएँ रोग दुःख शोक आदि मेरी आत्मा में प्रवेश नहीं कर सकतीं। संसार की क्षण भंगुर वासना तरंगे अब मुझे पथ विचलित नहीं कर सकतीं।"

"मैं मिथ्या अभिमान में दूसरों की कुछ परवाह नहीं करता था, मद होश था, अपने को ही कुछ समझता था किन्तु आत्मा के अन्दर प्रवेश करने से मेरा मिथ्या गर्व चूर्ण हो गया है। मुझे अपने पूर्व कृत्यों पर हँसी आती है।"

"संसार के कोई आन्दोलन, क्षुद्र लहरें, फिरके-बंदी मुझे बलात् अपनी ओर आकृष्ट नहीं कर सकते। मैं अब उनसे बहुत ऊँचा हूं। सनातन हूं। मुझे इस महा सत्य पर दृढ़ विश्वास हो गया है। मेरा मन पवित्र हो गया है। इन्द्रियां सुशान्त हो चमकने लगी हैं। सर्वोत्तम दृष्टि मिल गई है। मेरी आत्म दृढ़ता से टकराकर प्रतिकूलताएँ चूर चूर हो जाते हैं। वि[illegible]त्तियों को देखकर मैं कभी अधीर नहीं होता।"

"मुझे अपनी आत्मा से प्रेम है। उस पर[illegible] विशुद्ध दिव्य पदार्थ के अतिरिक्त मुझे कुछ दृष्टि-गोचर नहीं होता। मुझे अपनी आत्मा में प्रवेश करने पर सर्वोत्तमदृष्टि की प्राप्ति हुई है। कोई भी स्थान मेरी शाश्वत आत्मा से खाली नहीं है। ए[illegible] अद्वितीय परम आत्मा का मैं अपने इर्द गिर्द सर्व दर्शन करता हूँ। समग्र विश्व में इसी उन्मुक्त आत[illegible] का आनन्द स्वरूप दर्शन करता हूं। सचमुच मु[illegible] आत्मा का आश्रय है।"

प्रति दिन बिना भूले इस मानसिक क्रिया को दृढ़ता पूर्वक दुहराइए। जितनी दृढ़ता से उपरोक्त भावना पर मन को एकाग्र करोगे उतना ही आध्यात्म दृष्टि का संस्कार होगा।

लड़कपन स्वर्गीय आनन्द का समय है। जवानी धन कमाने का समय है। किन्तु बुढ़ापा केवल सञ्चित किये हुए धन से सुख ही प्राप्त करने का समय नहीं है, बल्कि ईश्वर का भजन करने का भी समय है।

× × × ×

त्यागी तपस्वी दीपक से कहा—पूज्यवर ? मुझ अज्ञान बालिका को क्षमा दान करते हुए ऐसा आशीर्वाद दीजिये मैं भी आपकी भांति कर्तव्य की वेदी पर सर्वस्व बलिदान कर सकूँ और अपने प्रियजनों को आत्मोत्सर्ग करते देखकर मोहवश बाधक न बनूँ।

जुकाम हमारा दोस्त है।

(डा० विट्ठलदास मोदी, आरोग्य मंदिर, गोरखपुर)

शीर्षक देखकर आप न चौंकिए। दुनियां में ऐसे बहुत से लोग हैं जो दोस्त को दुश्मन मान लेते हैं। उनकी गलतफहमी दूर की जाती है और गलतफहमी दूर होने पर उनका दृष्टिकोण बदल जाता है तथा वे कृतज्ञता का अनुभव करने लग जाते हैं। शायद अन्त में आप भी कुछ ऐसा ही अनुभव करें।

गरमी से हैजे का, बरसात से जूड़ी ताप का, वैसा घनिष्ट सबंध नहीं समझा जाता जैसा जाड़े का सर्दी-जुकाम से। यों तो सर्दी-जुकाम सब ऋतुओं में ही होता है पर जाड़े में तो यह सारे दिन सर से ... तक गरम कपड़े लादे रहने एवं सारी रात घर केवाड़ बन्द कर सोने पर भी आए दिन मेहमानी आता ही रहता है और इसका कष्ट बड़ा ... होता है कड़वा इस मानी में कि ज्वर आने ... आदमी लेटा रहता है, पर जुकाम होने पर ... काम लायक दिखने पर भी काम नहीं किया ... तबियत नहीं लगती, सिर भारी रहता है, ...गे खास तौर से साफ नहीं रहता, बदन ...ता है गन्ध का अनुभव नहीं होता और ...ी जाती है।

...काम क्यों होता है?—जो हमें न खाना ... वह हम खाते हैं, जो हमें न पीना चाहिए वह ... हैं। गन्दी हवा में हमें न रहना चाहिए, ...टे बन्द कमरों में काम करते हैं और गन्दी ...लते हैं, जिससे शरीर में गन्दगी इकट्ठी ...दि हम ठीक खाएँ पिएँ तब भी तो पाचन ...में कुछ मल रह ही जाता है और ...निकालने के लिए शरीर में मल द्वार ...चा, मूत्र और मलद्वार ये हमेशा अपना कार्य करते रहते हैं, पर जब ये सारी गन्दगी नहीं निकाल पाते तभी शरीर सफाई के हेतु विशेष प्रयास करता है। इस विशेष प्रयास का फल जुकाम भी है। तो फिर इसे दुःख क्यों मानें?

घर हम रोज झाड़ते बुहारते हैं पर दीवाली के अवसर पर उसकी विशेष सफाई कर हमें कितनी खुशी होती है। उसी तरह अपने शरीर के सफाई के इस प्रयास में हमें हमदर्द की तरह मदद करना चाहिए और उसके संकेतों पर अमल करना चाहिए। जब भूख नहीं लगती तो क्यों खांय? जब काम करने की इच्छा नहीं होती तब क्यों न आराम करें?

आंतों की सफाई—मल-द्वारों को भी तेजी से काम करने में संलग्न कीजिए। सब से पहले एक डेढ सेर गुनगुने पानी का एनीमा लेकर बड़ी आँतों को साफ कर डालिए और दो दो घंटे पर एक एक प्याला गरम पानी भी पीते रहिए। इससे आमाशय धुल जायगा। जो एनीमा न ले सकें वे एक दूसरी तरकीब करें—

आध सेर पालक, पाव भर शलजम (पत्ती समेत), पाव भर गाजर, पाव भर टमाटर, एक छटाक धनिये की पत्ती और तोला भर अदरक साफ करके और छोटा छोटा काट कर एक बटली में डाल कर सेर भर पानी के साथ पकावें। इन में से कोई चीज न मिले तो उसके बदले मूली, प्याज वगैरह डाला जा सकता है या उसके बगैर भी काम चल सकता है पर पालक जरूर रहे या उसके बदले कोई पत्तीदार हरी भाजी। बटली के मुँह को पानी से भरी कटोरी से बन्द कर दीजिए। इससे तरकारियों का पानी न जलेगा। पक जाने पर तरकारियों को एक साफ कपड़े से छान लीजिये। सेर डेढ सेर अर्क निकलेगा। इस में थोड़ा नमक, नीबू का रस, और भुना जीरा पीस कर मिला कर या सादा ही तीन तीन घण्टे पर आध-आध सेर की मात्रा में पीते रहिये। बच्चे थोड़ी मात्रा में लें। दिन भर में

ाच बार पियें। पेट खूब साफ होगा और कुछ कुछ सीना भी आवेगा। इसके साथ साथ अच्छी साफ वा में रहिये। कमरे की खिड़कियां खोलकर सोइये, ञराइये नहीं। सबेरे आठ नौ बजे के बीच पन्द्रह ोस मिनट तक खुले बदन पर धूप भी लगने दीजिए।

बस यही जुकाम की दवा है, दोस्त जुकाम का स्वागत है। एक दो दिन में ही नाक साफ होजायगी, ुलकर भूख लगेगी, दिमाग तेजी से काम करेगा, और आप अपने में एक नवीन चैतनता एवं जीवता का अनुभव करेंगे। आप के लिए स्वास्थ्य का अर्थ दूसरा ही हो जायगा। आप कहने लगेंगे चलते फिरते नजर आना ही स्वास्थ्य नहीं है।

जुकाम बिगड़ कर निमोनिया, दमा, यक्ष्मा, उन्हीं को होता है जो शरीर से निकलते हुए इस मल को दवा के सहारे दबाते हैं। गन्दगी अन्दर चली तो जाती है पर फिर नये रूप में बाहर आती है जिसे नये नाम मिलते हैं। उसकी फिर चिकित्सा होती है और वह फिर अन्दर जाकर नया जामा पहन कर बाहर आती है इसी तरह ताँता चलता रहता है।

पुराना जुकाम—कुछ लोग ऐसे भी हैं जिन्हें हमेशा जुकाम बना रहता है। इस तरह के रोगी भी ऊपर के सिद्धान्तों के अनुसार चलें। अपने भोजन में हरी तरकारियां और फलों की अधिक मात्रा रखें इस से पेट साफ रहेगा। कुछ ऐसी भी कसरत करें जिससे पसीना बह चले। जो कमजोर हैं और कड़ी कसरत नहीं कर सकते वे दिन में किसी भी समय या अच्छा हो कि रात को सोने के पहले एक कुर्सी या स्टूल पर बैठकर अपने पैरों को गरम पानी से भरी बाल्टी या किसी बरतन में पन्द्रह बीस मिनट तक रखें। पानी घुटने के नीचे तक रहे। पानी जरा ज्यादा गरम हो पर इतना ही जितने से तकलीफ न हो। पानी के ठण्डा होने पर बीच बीच में गरम पानी मिलाते रहिये। एक कम्बल भी ओढ़ लें। कुछ पसीना आयेगा। ज्यादा पसीना लाने के लिये एक गिलास गरम पानी भी पी लेना चाहिये। समय हो जाने पर पैरों को ठण्डे पानी से धोकर सूखी तोलिया से पोंछ लें और सो जाँय या कुछ देर आराम करें। नाक उसी वक्त साफ हो जायगी और पांच सात दिन यह क्रिया करने से सर्दी जड़ से चली जायगी। जिन्हें नई सर्दी भी हो वे भी इस प्रयोग से लाभ उठा सकते हैं।

पिता वह नहीं, जिसने तुम्हें केवल पैदा कर दिया बल्कि वास्तविक पिता वह है, जिसने तुम्हें सचमुच मनुष्य बनाने का तन-मन-धन से प्रयत्न किया।

सात्विक सहायताएें।

इस मास ज्ञान यज्ञ के लिये निम्न लिखित सात्विक सहायताएं प्राप्त हुई। अखण्ड ज्योति इन महानुभावों के प्रति अपनी आन्तरिक कृतज्ञता प्रकट करती है।

८) श्री. बालगोविन्द सी. पटेल अहमदाबाद
८) श्री. रघुबीर प्रसाद गोहनलालजी कटनी
५) श्री. गोवर्धनदास खिमजी भाई पौनी
५) श्री. केशरीमल जी कोठारी बम्बई
२) श्री. ठाकुरप्रसाद सिंहजी नौतनवा बाजार
२) पं० श्यामजी शर्मा भदवर
२) मंत्रीजी स्वतन्त्र कुटीर जयन्ती
१) पं० द्वारिकाप्रसाद शर्मा छुरी कटघोरा
१) श्री. रामकृष्ण वर्मा लखनऊ
१) पं० जगन्नाथप्रसादजी अध्यापक जयपुर
१) चौ. हरसहायजी खवा
१) चौ. विश्वम्भरदयालजी सुरजनपुर
१) पं० ओंकारनाथ तिवारी बसेंडी
१) श्री. मुकटबिहारीलालजी तिलहर
१) श्री. दशरथसिंहजी मंडलोई सेन्धवा
१) श्री. सदाशिव जोशी झोपाली सेन्धवा

मुक्ति के चार द्वारपाल।

(पं० चन्द्रदेव शर्मा, पु. तीर्थ. सा. रत्न, बेतिया)

अज्ञान के बन्धन में से ज्ञान रूपी मुक्ति के प्रकाश में ले जाने वाले उपायों में से आध्यात्म विद्या के आचार्यों ने चार को सर्व प्रधान माना है। (१) सत्सङ्ग (२) विचार (३) शम (४) सन्तोष। श्रेष्ठ पुरुषों की वाणी या लेखनी से निकले हुए विचारों को ग्रहण करना, उनके आचरणों के अनुसार अपने जीवन को ढालने का प्रयत्न करना, उनके जैसे सद्गुणों का अपने में पैदा करना यही सत्सङ्ग है। मनुष्य कोरे कागज के समान होता है इस पर सङ्गति का असाधारण प्रभाव पड़ता है। जैसे लोगों के बीच जैसे वातावरण के बीच मनुष्य रहता है वैसा ही बन जाता है। इसलिये अपने को श्रेष्ठ बनाने के इच्छुकों के लिए सब से पहली आवश्यकता इस बात की है कि अपने को श्रेष्ठ सङ्गति समीप ले जावें। मुक्ति का दूसरा उपाय है—विचार। उचित अनुचित का, सत्य असत्य का, आवश्यक अनावश्यक का, धर्म अधर्म का, विचार करते रहने से जीवन तत्व को प्राप्ति होती है। इस संसार में सीधे, विचार विश्वास और आचरण भरे हैं किसी का अन्धानुकरण करना एक खतरे की बात है। विवेक की कसौटी पर हर एक विचार सिद्धान्त को खूब घिस घिसकर परखना चाहिए जो बात सत्य एवं उचित प्रतीत हो विचारपूर्वक ग्रहण करना और आचरण में लाना चाहिये। तीसरा उपाय है—शम। इन्द्रिय निग्रह, संयम, वासनाओं पर आधिकार, दुर्भावों का दमन, कुविचारों का समाधान करके अपनी आत्मिक स्थिति को स्थिर रखना शम कहलाता है। चौथा उपाय सन्तोष—जैसी स्थिति उपलब्ध हो उससे ही बिना दुःख पाये काम चला लेना और भविष्य के लिये उन्नति के लिये घोर प्रयत्न करते रहना। इन चारों से मुक्ति मिलती है।

"मामनुस्मर युध्यच"

(श्री जनार्दन पाण्डेय शास्त्री, सालम)

गीता में इस छोटे सूत्र द्वारा मानव जाति को उसका कर्तव्य धर्म भले प्रकार समझा दिया है। (१) मेरा स्मरण कर और (२) युद्ध कर, यह दो बात ही इन मनुष्य प्राणियों के लिए भगवान ने करणीय बताई हैं।

युद्ध करना, धर्मयुद्ध में हर घड़ी प्रवृत्त रहना, जीवन संग्राम में शूरवीर सैनिक की तरह जूझते रहना, जीवन को कायम रखने और विकसित करने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। यदि मनुष्य, जीवन मार्ग में आने वाली कठिनाइयों से न लड़े, दुष्ट एवं दुरात्मा लोगों के दुष्प्रयत्नों को निष्फल बनाने का उद्योग न करे, जीवनोपयोगी आवश्यक सुविधाओं एवं साधनों को उपार्जन करने का पौरुष न करे तो उसकी सारी क्रिया शक्ति का नाश हो जायगा, ईश्वर प्रदत्त सम्पूर्ण प्रतिभा शक्ति अस्तव्यस्त हो जायगी। ऐसी दशा में उन्नत, आवश्यक और सुविधा सम्पन्न जीवन जीना भी कठिन हो जायगा। क्योंकि निष्क्रिय निर्बल हो जाता है और निर्बल के लिये प्रकृति का यह नियम है कि उसे निकटवर्ती सशक्त सत्तायें खाना और मिटाना आरम्भ कर देती है। जीवन युद्ध के लिए, धर्म युद्ध के लिए, खड़ा न होने वाला मनुष्य स्वधम और कीर्ति का नाश करके पाप को प्राप्त होता है, दीनता, दासता और पीड़ा के चंगुल में फँस जाता है।

युद्ध करना, जीवन को विकसित करने वाला मनुष्य का ईश्वर दत्त स्वभाव है। किन्तु इस स्वभाव के ऊपर भी अंकुश रहना चाहिये। 'मामनुस्मर' परमात्मा को स्मरण करता हुआ युद्ध कर। पाप पुण्य का विचार करते हुए, धर्म अधर्म का, उचित अनुचित का ध्यान रखते हुए, युद्ध करना चाहिये। ऐसा न हो कि स्वार्थ में अन्धा होकर दूसरों को अनुचित रीति से सताते हुये अपनी उन्नति करे।

बौद्ध-योग के पांच ध्यान।

(श्री० गोपालप्रसाद 'वंशी' बेतिया)

श्री भगवान बुद्ध ने पांच प्रकार के ध्यान की शिक्षा दी है।

पहला योगाभ्यास—यह 'प्रीति' या 'प्रेम' का ध्यान है। इस ध्यान में तुम अपने मन को इस प्रकार साधते हो कि जीव मात्र का भला चाहते हो, यहां तक कि अपने शत्रुओं से भी भ्रातृ भाव रखते हो। इसी का नाम 'सत्वषु मैत्री' है। इस में निरन्तर तुम्हारी यही भावना रहती है कि सब का भला हो।

दूसरा योगाभ्यास—यह ध्यान 'दया' और 'करुणा' का है। इस में तुम यह चिन्तवन करते हो कि सब जीव दुख में हैं और अपनी कल्पना शक्ति के द्वारा उन के दुखों का चित्र भी अपने हृदय पट पर खींचते हो कि जिस से तुम्हारे मन में उनके प्रति दया का भाव उत्पन्न हो और तुम से जो कुछ बन सके उनकी सहायता करो।

तीसरा योगाभ्यास—यह ध्यान 'हर्ष' और 'सुख' का है। इस में तुम दूसरों के कल्याण का विचार करते हो और उनकी प्रसन्नता से प्रसन्न हो कर उनकी मङ्गल-कामना की भावना करते हो।

चौथा योगाभ्यास—'अपवित्रता' का ध्यान है। इसमें तुम रोग, शोक और पाप के बुरे परिणामों पर विचार करते हो और यह सोचते हो कि इन्द्रिय-जन्य सुख बहुधा कैसे तुच्छ होते हैं और उनके कैसे भयङ्कर फल होते हैं।

पाँचवाँ योगाभ्यास—'शान्ति' का ध्यान है। इसमें तुम्हारे मन से राग-द्वेष, हानि-लाभ, निष्ठुरता और पीड़ा, ऐश्वर्य और दरिद्र, सम्पत्ति और विपत्ति, न्याय और अत्याचार के विचार निकल जाते हैं। अपनी वर्तमान दशा पर सब प्रकार सन्तुष्ट रहते हो। न तुम्हें किसी वस्तु की चाह होती है और न किसी की आवश्यकता होतीहै। प्रत्येक दशामें तुम परमात्मा के अनुगृहीत और कृतज्ञ हो। तुम्हारे क्रमशः इन पांचों ध्यानोंका अभ्यास करने से मुक्ति पद को पाता है।

सफलता का रहस्य।

(श्री शिवदानप्रसाद सिंह, बी. ए , एल. एल. बी. मिर्जापुर)

सफलता के मूल सिद्धान्तों पर विचार कीजिये। संसार में कोई ऐसी वस्तु अथवा ... नहीं है जो प्राप्त न की जा सके। परन्तु उस प्राप्ति के जो नियम हैं, उनका निवाहना अथवा निवाहना ही सफलता तथा विफलता के बीच ... अन्तर है। एक व्यक्ति थोड़ी ही शिक्षा से विशे... सफलता प्राप्त कर लेता है, परन्तु दूसरा व्यक्ति विशिष्ट शिक्षा-सम्पन्न होते हुये भी उतनी सफलता नहीं पा लेता जितना कि अल्प शिक्षा वाला व्यक्ति पाये हुये है। इन दोनों में अन्तर केवल इतना ही कि प्रथम व्यक्ति ने एक लक्ष्य अपना लिया और उस पर कटिबद्ध होकर, उससे प्रेम करते हुये उस पीछे लग गया और इस तौर पर उसने सफलता के तत्वों को अपनी ओर आकर्षित किया। परन्तु दूसरे व्यक्ति ने मन की चञ्चलता के कारण अपने लक्ष्य को बदलता रक्खा तथा अपने कार्य से प्रेम करने के स्थान पर उसके प्रति उदासीनता का भाव धारण किया। परिणाम स्वरूप कठिन परिश्रम करने पर भी वह सफलता से दूर रहा, क्योंकि उसने उस के नियमों की अवहेलना की उसकी कार्य-प्रणाली में दोष आ गया। पाठकों ने देखा होगा कि जिस स्थान पर किसी नदी का जल एक सङ्कीर्ण मार्ग से बहता होता है वहां पर उसकी धारा का वेग अधिक तीव्र रहता है, अपेक्षा उस स्थान के पर कि उसका जल दूर तक फैला रहता ... मन की एकाग्रता और इच्छा शक्ति की ... से कठिन कामों में भी आसानी से सफलता ... जाती है।

मनः शक्ति का सदुपयोग करो।

(श्रीमती लिली एलन)

एक पर्वत में से एक छोटी नदी निकल कर मैदान में बह रही थी। उसकी धारा बहुत पतली थी और वेग भी बहुत मन्द था। एक विचारवान् मनुष्य ने उसे देखा। वह सोचने लगा कि यदि सदुपयोग किया जा सके तो इस छोटी नदी के पानी से भी बहुत लाभ उठाया जासकता है। उसने इंजीनियरों की सहायता से जगह जगह बांध बँधवाये, नहर निकालीं, बड़े बड़े तालाब बनवाये, पानी को रोककर इच्छानुसार काम में लाने का प्रबन्ध किया। कुछ ही दिनों में उस नदी से हजारों लाखों बीघे जमीन सींची जाने लगी, पनचक्कियां चलने लगीं, बिजली घर बन गया जिससे रोशनी तथा कई तरह के कल कारखाने चलने लगे।

मनुष्य की मानसिक शक्ति उसी छोटी नदी के समान है जिसका जल इधर उधर निरर्थक नष्ट हो जाता है। किन्तु जब कोई विचारवान मनुष्य इसका सदुपयोग करने की सोचता है और उसे लाभदायक कार्यों में लगाने का प्रयत्न करता है तो परिणाम ऐसा ही आशा जनक और चमत्कार पूर्ण निकलता है जैसा कि उस नदी के सदुपयोग का निकला था।

हमें इस सचाई को भली प्रकार हृदयङ्गम कर लेना चाहिए कि मनुष्य ऐसा लकड़ी का टुकड़ा नहीं है जिसे संसार सागर की लहरें चाहे जहाँ बहा ले जावें। हम अपने भाग्य के स्वामी स्वयं हैं, हैं। आप अपने लिए भली बुरी परिस्थितियों का निर्माण करते हैं। मन की जादू भरी शक्ति ऐसी विचित्र है कि उसके तनिक से घुमाव फिराव में जीवन कुछ से कुछ बन जाता है। निशाना लगाते समय बन्दूक की नली यदि आध इञ्च नीची ऊँची होजाय तो निशाना गजों नीचा ऊँचा हो जाता है। मानसिक वृत्तियों का जरासा उतार चढ़ाव बाह्य जीवन में असाधारण परिवर्तन उपस्थित कर देता है।

जीवन की प्रसन्नता दायक हर एक चीज परमात्मा ने हमारे लिए पैदा की है। हवा, गर्मी, पानी और भोजन हर एक को प्राप्त होता है, इन जीवनोपयोगी वस्तुओं की संसार में कुछ भी कमी नहीं है फिर भी कुछ लोग ऐसे हो सकते हैं जो अपनी नासमझी के कारण इन वस्तुओं को प्राप्त करने से वंचित रहें। इसी प्रकार यह भी हो सकता है कि कुछ लोग दुर्भाग्य पूर्ण जीवन जियें जब कि परमात्मा ने उन्हें सुख शान्ति का जीवन बिताने के लिए पर्याप्त सामिग्री दी है। मन एक ऐसा तत्व है जिस का यदि सदुपयोग किया जाय तो जीवन को हर एक पंखुरी आनन्द और उल्लास के साथ खिल सकती है, इसके विपरीत यदि मन की शक्ति का दुरुपयोग किया जाय तो प्रचुर धन सम्पत्ति होते हुए भी मनुष्य असन्तुष्ट और अशान्त ही रहेगा।

विषय विकारों की कुवासना में मनको दौड़ाने से रोगों का उद्भव होता है। क्रोध करने से शरीर निस्तेज और आत्मा कलुषित बनती है। डर और घबराहट की वजह से दरिद्रता और असफलता का दर्शन होता है। कायर ईर्षालु और दुष्ट प्रकृति के लोग अपनी आग में आप ही जलते रहते हैं। निन्दा, चुगली, खुदगर्जी अहंकार और अभिमान की भावनाऐं मांस पेशियों को ऐसा ढीला कर देती है कि असमय में ही बुढ़ापा आ घेरता है। दुर्भावनाओं में मन को फँसाकर कोई आदमी इस दुनियाँ में चैन की जिन्दगी नहीं जी सकता।

मन को कुमार्ग से रोककर सत्मार्ग पर लगाना, जीवनोपयोगी आवश्यक कार्यों में प्रवृत्त करना, ऐसा ही है जैसा उस बुद्धिमान आदमी ने नदी को रोक कर उसके पानी से लाभ उठाया था। बुरे मार्ग पर मनको चलने देना, निरर्थक और हानिकर बातों में चित्त को उलझाये रहना, अपनी जीवनी शक्ति का, प्राण शक्ति का सर्वनाश करना है। इसलिए मैं उन लोगों से जो अपने जीवन को महत्व पूर्ण बनाने के इच्छुक हैं कहती हूं कि मन पर काबू कीजिए, उसे उचित दिशामें लेजाइये मनःशक्तिका सदुपयोगकीजिए

अखण्ड-ज्योति

(लेखक—शिवस्वरूप शर्मा 'अचल विशारद')

मानव ! उर का अवलोकन कर, जलती है ज्योति अखंड यहीं।

कण्टकाकीर्ण-जीवन-पथ में—
सुमनों के अनुपम लेख लिखे ।
है स्वयं सफलता खड़ी यहीं—
कुछ नयन खोल कर देख, सखे ॥
जगती के इस कोलाहल में—
स्पन्दन का कुछ ज्ञान करो ।
मानवता के पीड़ित दल के—
क्रन्दन पर भी कुछ ध्यान धरो ॥

भटको मत, अरे निराशा में, आशा का और आधार नहीं।
मानव ! उर का अवलोकन कर, जलती है ज्योति अखंड यहीं॥

तुम खोज चुके गिरिवर-गह्वर—
नक्षत्र लोक नभ जल थल को।
तुम खोज चुके मन्दिर, मसजिद,
गिरजाघर की सब हलचल को॥
तुम स्वयं खोजने निकले थे—
पर अपने को भी खो बैठे ।
तुम चले खोजने भेद अरे !
पर खुद रहस्यमय हो बैठे !!

अब तुम अपने को ही खोजो, अपने में अपना और कहीं ।
मानव ! उर का अवलोकन कर, जलती है ज्योति अखंड यहीं॥